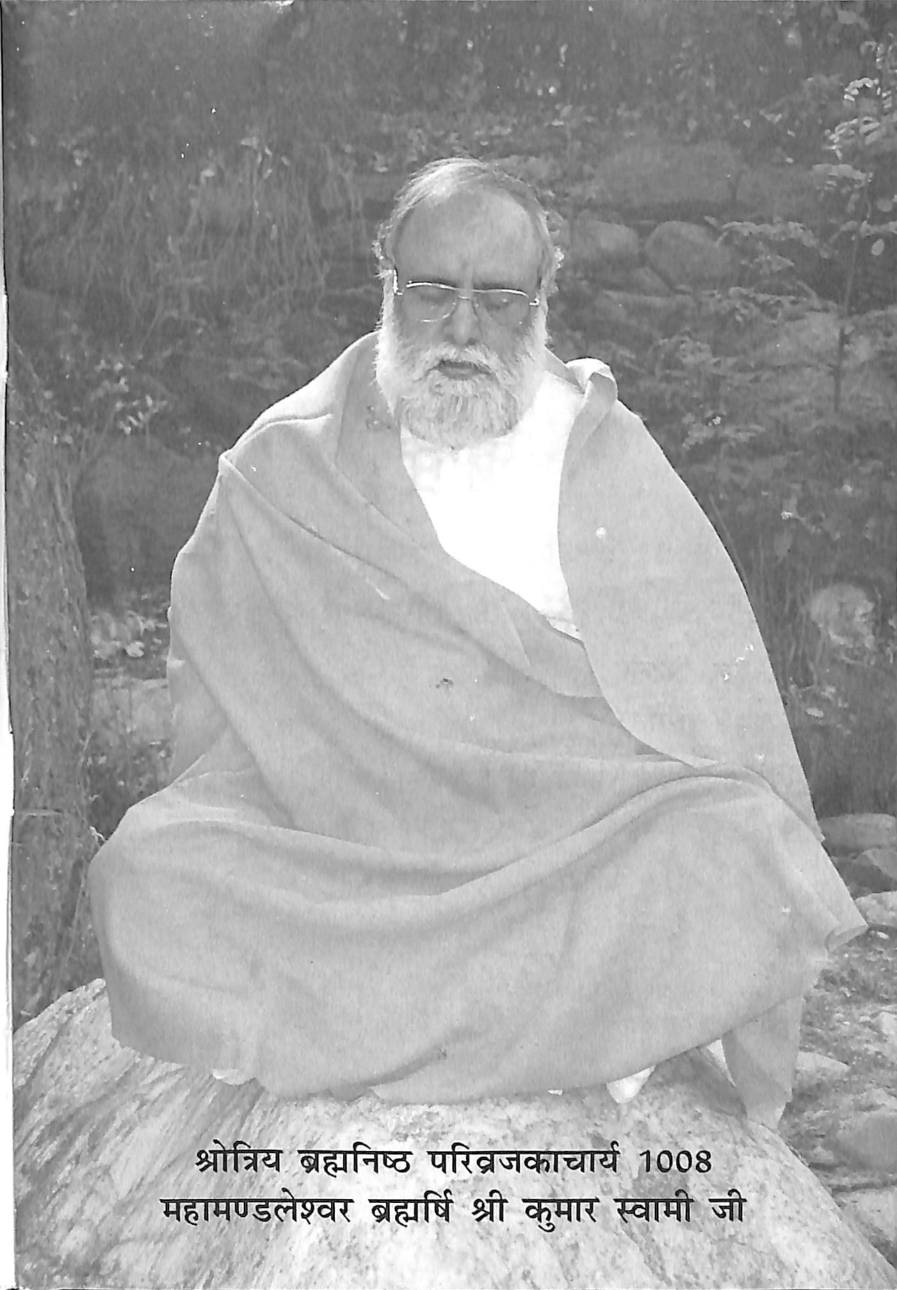
श्री गुरु गीता




श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ परिव्रजकाचार्य 1008
महामण्डलेश्वर ब्रह्मर्षि श्री कुमार स्वामी जी

प्रकाशक

नारायण शक्ति पीठ

सी–27, द्वितीय तल,

ग्रेटर कैलाश एन्क्लेव–1,

नई दिल्ली–110048

मुद्रक

एस. एस. प्रिंटर्स

बी–54 (बेसमेंट),

नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेज–2

नई दिल्ली–110028

सातवां संस्करण

सितम्बर 2016

मूल्य 31 रुपए

श्री गुरु गीता

संस्थापकाचार्यः
श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ परिव्रजकाचार्य 1008
महामण्डलेश्वर ब्रह्मर्षि श्री कुमार स्वामी जी

प्रथमोअध्यायः श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वर संवाद
द्वितीयोअध्यायः श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वर संवाद
तृतीयोअध्यायः श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वर संवाद

संकलन एवं टीकाः आचार्य पं. हरिशरण बुड़ाकोटी

भूमिका

नमो नारायण, नमः शिवाय

भगवान शिव इस अखिल ब्रह्मांड के अभियंता, नियंता, साक्षी एवं सर्वेसर्वा हैं, जो सदा एक रस प्रतिपल प्रत्येक स्थान पर सम एवं सर्व शक्तिमान हैं। सभी धर्मावलंबी सर्वोपरि एक अदृश्य शक्तिमान सत्ता पर विश्वास करते हैं तथापि हिंदू सनातन धर्वावलंबियों की तो परिपूर्ण आस्था है। संसार में दो प्रकार की निष्ठाएं हैं साकार और निराकार अर्थात निर्गुण और सगुण। सकार ईश्वर जिससे वरदायी होने के लिए सभी प्रार्थना करते हैं।

वेद-वेदांगों तथा पुराणों के महाज्ञाता शौनकादि ऋषियों ने सूत जी से सद्गुरु के विषय में जो प्रश्न किए हैं उनके जनकल्याणकारी उत्तर श्री गुरु गीता में समाहित हैं। श्री गुरु गीता सद्गुरु की महिमा के विषय में भगवान शिव और मां पार्वती के दिव्य संवाद का महाग्रंथ है।

सूत जी ने कहा कि- गुरु गीता की महिमा अपरंपार है। सभी उपासकों के लिए अत्यंत ज्ञानप्रद है। भगवान शिव के उपासक, मां शक्ति के उपासक, सभी मतवादी श्री गुरु गीता का पाठ करते हैं। श्री गुरु गीता की इतनी महिमा है कि यदि मृत्यु शैय्या पर भी कोई इसका जाप करे तो वह निश्चित ही मोक्ष की प्राप्ति करता है। श्री गुरु गीता के नियमित जाप से जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति मिलती है। श्री गुरु गीता में इस बात का उल्लेख है कि गुरु सेवा परम धर्म है और जो गुरु सेवा से विमुख होता है वह नरक का भागी बनता है। सद्गुरु की नष्ठा ही परम तप है। इस ब्रह्मांड में 7 करोड़ महामंत्र विद्यमान हैं लेकिन गुरु गीता सबसे बड़ा, दुर्लभ,

गोपनीय महाग्रंथ व सभी मंत्रों का मुकुटमणि है।

भगवान भोलेनाथ ने मां पार्वती से कहा कि इस पृथ्वी पर श्री गुरु गीता जैसा कोई अन्य ग्रंथ नहीं है। यह सभी दुखों का नाश करने वाला है। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं-हे देवी गुरु गीता को नित्यभाव पूर्वक हृदय में धारण करो, महाव्यादि वाले दुखी लोगों को सदा आनंद से इसका जप करना चाहिए जिससे उनके सारे कष्ट समाप्त हो जाते हैं। गुरु गीता सभी प्रकार के दारिद्र्य व कष्टों को दूर कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्रदान करने वाला है।

सद्‌गुरु देव की असीम कृपाओं से भरी इस श्री गुरु गीता के संकलन व टीका का श्रेयस्कर कार्य आचार्य पं. हरिशरण बुड़ाकोटी जी ने अनेक ग्रंथों की सहायता से किया है। हम कामना करते हैं कि समस्त श्रद्धालु श्री गुरु गीता का नियमित जप कर अपने जीवन को समस्त कष्टों से मुक्त करें।

प्रकाशक

श्री गणेशाय नमः
प्रथमोअध्यायः

अचिन्त्य अव्यक्त-रूपाय निर्गुणाय गुणात्मने।
समस्त जगद् आधार-मूर्तये ब्रह्मणे नमः॥1॥

जो ब्रह्म अचिन्त्य, अव्यक्त, सत, तम, रज, तीनों गुणों से रहित होकर भी जो अज्ञान रूपी अन्धकार की उपाधि को दूर करने वाले त्रिगुणात्मक समस्त जगत का अधिष्ठान रूप है। ऐसे ब्रह्म को नमस्कार है।

ऋषयः ऊचुः

सूत सूत महाप्राज्ञ निगम-आगम-पारग।
गुरुस्वरूपम् अस्माकं ब्रूहि सर्व-मलापहम्॥2॥

शौनकादि ऋषियों ने कहा- हे महाज्ञानी वेद-वेदांगों तथा पुराणों के निष्णात ज्ञाता प्रिय सूत जी सर्वपापों एवं दुःखों का नाश करने वाले सद्गुरु के स्वरूप के विषय में हमें उपदेश करें।

यस्य श्रवण-मात्रेण देही दुःखाद् विमुच्यते।
येन मार्गेण मुनयः सर्वज्ञत्वं प्रपेदिरे॥3॥
यत् प्राप्य न पुनर्-याति नरः संसार-बन्धनम्।
तथाविधं परं तत्वं वक्तव्यम् अधुना त्वया॥4॥

जिसको सुनने मात्र से मनुष्य दुःखों से विमुक्त हो जाता है। जिस मार्ग और उपाय से मुनियों ने सर्वज्ञता प्राप्त की है। जिसको प्राप्त करके मनुष्य मोक्ष के द्वार का मार्ग प्राप्त करता है और संसार रूपी मोह में नहीं बंधता है।

गुह्याद् गुह्यतमं सारं गुरुगीता विशेषतः।
त्वत् प्रसादात् च श्रोतव्या तत् सर्वं ब्रूहि सूत नः।।5।।

जो परम तत्व, परम रहस्यमय एवं सर्वश्रेष्ठ सारभूत है। विशेष कर जो गुरुगीता है। वह आपकी कृपा से हम सुनना चाहते हैं। प्यारे सूत जी कृपा करके वह सब हमे सुनाइये।।5।।

श्री सूत उवाच-

इति संप्रार्थितः सूतो मुनिसंघैर्-मुहुर्मुहुः।
कुतूहलेन महता प्रोवाच मधुरं वचः।।6।।

इस प्रकार बार-बार वन्दन, एवं प्रार्थना किए जाने पर सूत जी शौनकादि ऋषियों से प्रसन्न होकर मुनि समूह से मधुर वाणी में बोले।

शृणुध्वं मुनयः सर्वे श्रद्धया परया मुदा।
वदामि भव-रोगघ्नीं गीतां मातृ-स्वरूपिणीम्।।7।।

सूत जी ने कहा-हे शौनकादि ऋषियों जो गुरुगीता मैं आपको सुना रहा हूँ। उसको आप अत्यन्त श्रद्धा और प्रसन्नता पूर्वक सुनिये संसार रूपी रोग का नाश करने वाली माता के समान ध्यान रखने वाली गुरुगीता है।

पुरा कैलास-शिखरे सिद्ध-गन्धर्व-सेविते।
तत्र कल्प-लता-पुष्प-मन्दिरे अत्यन्त-सुन्दरे।।8।।
व्याघ्राजिने समासीनं शुकादि-मुनि-वन्दितम्।
बोधयन्तं परं तत्त्वं मध्ये मुनिगणं क्वचित्।।9।।
प्रणम्र-वदना शश्वत् नमस्कुर्वन्तम् आदरात्।
दृष्ट्वा विस्मयम् आपन्ना पार्वती परिपृच्छति।।10।।

पूर्व काल में सिद्ध और गन्धर्वो का निवास स्थान केलाश पर्वत के शिखर पर था, वहां कल्पवृक्ष के फूलों से बने हुए अत्यन्त सुन्दर मन्दिर में बैठे हुए शुकादि ऋषियों के बीच में व्याघ्रचर्म पर बैठे हुए ऋषियों के द्वारा बार-बार वन्दन किए जाने वाले परम तत्व का बोध देते हुए, भगवान शंकर को बार-बार नमस्कार करते देखकर अतिशय नम्र मुखवाली पर्वती ने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

पार्वती उवाच

ॐ नमो देव-देवेश परात्पर जगद्गुरो।
त्वां नमस्कुर्वते भक्त्या सुरासुर-नराः सदा॥11॥

पार्वती ने कहाः हे ओंकार रूप ब्रह्मा, विष्णु, महेश, देवों के देव महादेव, श्रेष्ठों से भी श्रेष्ठ जगद्गुरु आपको प्रणाम है। देवता, दानव तथा मनुष्य सब आपको सदैव भक्ति भाव पूर्वक प्रणाम करते हैं।

विधि-विष्णु-महेन्द्राद्यैर्-वन्द्यः खलु सदा भवान्।
नमस्करोषि कस्मै त्वं नमस्काराश्रयः किल॥12॥

आप ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि देवताओं से सदा पूज्य हैं। आप स्वयं नमस्कार के योग्य (नमस्काराश्रय) होकर भी किसको नमस्कार करते हैं?

भगवन् सर्वधर्मज्ञ व्रतानां व्रत-नायकम्।
ब्रूहि मे कृपया शम्भो गुरु-माहात्म्यम् उत्तमम्॥13॥

हे भगवन! आप सभी धर्मों के ज्ञाता हैं। हे शंभो! जो व्रत सब व्रतों में श्रेष्ठ है। ऐसे उत्तम गुरु-माहात्म्य सुनने की मेरी

इच्छा है। कृपा करके मुझे सुनाएं।

इति संप्रार्थितः शश्वद् महादेवो महेश्वरः।
आनंद-भरितः स्वान्ते पार्वतीम् इदम् अब्रवीत्॥14॥

पार्वती देवी द्वारा इस प्रकार वार-वार प्रार्थना किए जाने पर भगवान शंकर, अन्तःकरण से प्रसन्न होते हुए पार्वती जी से इस प्रकार बोले।

श्री महादेव उवाच

न वक्तव्यम् इदं देवि रहस्याति-रहस्यकम्।
न कस्यापि पुरा प्रोक्तं त्वद्-भक्त्यर्थं वदामि तत्॥15॥

श्री महादेव जी ने पार्वती जी से कहा- हे देवी यह तत्व रहस्यो का भी रहस्य है। इसलिए कहना उचित नहीग है और पहले किसी से भी नहीं कहा परन्तु मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूं इसलिए वह रहस्य कहता हूँ।

मम रूपासि देवि त्वम् अतः तत् कथयामि ते।
लोकोपकारकः प्रश्नो न केनापि कृतः पुरा॥16॥

हे देवी! तुम मेरा ही स्वरूप हो, तुम्हारा यह प्रश्न लोक कल्याणकारक है। ऐसा प्रश्न पहले कभी किसी ने नहीं किया इसलिए यह रहस्य तुमको कहता हूँ।

यस्य देवे परा भक्तिर्-यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥17॥

जिस प्रकार मनुष्य की परमात्मा में उत्तम भक्ति होती है, जिसकी भक्ति सद्गुरु में होती है, ऐसे महात्माओं को ही यहाँ कही हुई बात समझ में आयेगी।

योे गुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरुः स्मृतः।
विकल्पं यस्तु कुर्वीत स नरो गुरुतल्पगः॥18॥

जो गुरु है वही शिव है, जो शिव है वही गुरु है। दोनों में जो अन्तर मानता है। वह गुरुपत्नी गमन करने वाले के समान पापी है।

वेद-शास्त्र-पुराणानि चेतिहासादिकानि च।
मंत्र-यंत्र-विद्यादीनि मोहनोच्चाटनादिकम्॥19॥
शैव-शाक्तागमादीनि ह्यन्ये च बहवो मताः।
अपभ्रंशाः समस्तानां जीवानां भ्रान्त-चेतसाम्॥20॥
जपस्तपो व्रतं तीर्थं यज्ञो दानं तथैव च।
गुरु-तत्त्वम् अविज्ञाय सर्वं व्यर्थं भवेत् प्रिये॥21॥

हे प्रिये-वेद, शास्त्र, पुराण, इतिहास, आदि, मंत्र, तंत्र, यंत्र, सम्मोहन, वशीकरण, उच्चाटनादि, विद्या शैव, शाक्त, आगम और अन्य सभी मतमतांतर, ये सब बातें बिना 'गुरुतत्व को जाने' बिना जीवों का मार्ग भ्रान्त करने वाली हैं। अतः इन सभी चीजों को सद्गुरु के बिना नहीं जाना जा सकता है। बिना सद्गुरु के जप, तप, व्रत, तीर्थ, यज्ञादि, दान, अनुष्ठान आदि ये सब व्यर्थ हो जाते हैं।

गुरु-बुद्ध्यात्मनो नान्यत् सत्यं सत्यं वरानने।
तद् लाभार्थं प्रयत्नस्तु कर्तव्यश्च मनीषिभिः॥22॥

हे पार्वती देवी - आत्मा में सद्गुरु के द्वारा दी गई बुद्धि के सिवा अन्य कुछ भी सत्य नही है। इसलिए इस तत्व रहस्य को जानने के लिए और आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए बुद्धिमानों को प्रयत्न करना चाहिए।

गूढाविद्या जगद् माया देहश्च अज्ञान-सम्भवः।
विज्ञानं यत् प्रसादेन गुरु-शब्देन कथ्यते॥23॥

यह संसार गूढ़ अविद्यात्मक माया का रूप है और यह शरीर अज्ञान से उत्पन्न हुआ है। इनका विश्लेषणात्मक ज्ञान जिनकी कृपा से होता है या उस ज्ञान को जानने वाले को ही सद्गुरु देव कहते है।

देही ब्रह्म भवेद् यस्मात् त्वत्-कृपार्थं वदामि तत्।
सर्व-पाप-विशुद्धात्मा श्रीगुरोः पाद-सेवनात्॥24॥

जिस सद्गुरु देव के चरणों की सेवा करने से मनुष्य के सभी पाप मिट जाते हैं और वह विशुद्धात्मा होकर ब्रह्मरूप हो जाता है, उनका वर्णन तुम पर कृपा के लिए करता हूं।

शोषणं पाप-पंकस्य दीपनं ज्ञान-तेजसः।
गुरोः पादोदकं सम्यक् संसारार्णव-तारकम्॥25॥

श्री गुरुदेव का चरणामृत पाप रूपी कीचड़ को सुखा देता है, **ज्ञान-तेज को प्रकाशित करता है** और इस संसार रूपी सागर से निश्चित ही तारने वाला है।

अज्ञान-मूल-हरणं जन्म-कर्म-निवारकम्।
ज्ञान-वैराग्य-सिदध्यर्थं गुरु-पादोदकं पिबेत्॥26॥

अज्ञान को जड़ से उखाड़ने वाले, अनेकानेक जन्मों के कर्मों तथा कुकर्मों का निवारण करने वाले, ज्ञान और वैराग्य को सिद्ध करने वाले ऐसे सद्गुरु देव के चरणामृत का पान करना चाहिए।

स्वदेशिकस्यैव च नामकीर्तनम्
भवेद् अनन्तस्य शिवस्य कीर्तनम्।

स्वदेशिकस्यैव च नामचिन्तनम्
भवेदनन्तस्य शिवस्य चिन्तनम्।।27।।

जो अपने दिशा-दर्शक सद्गुरु के नाम का कीर्तन या स्मरण करता है वह अनन्त स्वरूप भगवान शिव का ही कीर्तन करता है। जो दिशा-दर्शक सद्गुरु के नाम का चिन्तन करता है वह अनन्त स्वरूप भगवान शिव का ही चिन्तन करता है।

काशी-क्षेत्रं निवासः च जाह्नवी चरणोदकम्।
गुरुः विश्वेश्वरः साक्षात् तारकं ब्रह्मनिश्चयः।।28।।

जिस प्रकार से भगवान शंकर का निवास स्थान काशी में है उसी प्रकार सद्गुरु देव का निवास स्थान भी काशी क्षेत्र में है। सद्गुरु देव का चरणामृत गंगाजी के समान है। जैसे भगवान विश्वनाथ अपने भक्त को इस संसार के माया, मोह से मुक्त कर देते हैं। उसी तरह सद्गुरुदेव भी निश्चित ही साक्षात् तारने वाले ब्रह्म हैं।

गुरु-सेवा गया प्रोक्ता देहः स्याद् अक्षयो वटः।
तत्-पादं विष्णु-पादं स्यात् तत्र दत्त-मनस्ततम्।।29।।

जो मनुष्य सद्गुरु देव की सेवा करता है। गुरुदेव की सेवा ही तीर्थराज गया के समान है। गुरुदेव का शरीर अक्षय वटवृक्ष है। गुरुदेव के श्रीचरण भगवान् श्री हरि विष्णु के चरण हैं। वहां लगाया हुआ मन तदाकार हो जाता है।

गुरु-वक्त्रे स्थितं ब्रह्म प्राप्यते तत् प्रसादतः।
गुरोर्-ध्यानं सदा कुर्यात् पुरुषं स्वैरिणी यथा।।30।।

श्री गुरुदेव के मुखारविन्द से निकले हुए वचनामृत में ही ब्रह्म स्थित है। गुरु की कृपा से ब्रह्म को भी प्राप्त किया जा सकता है। जिस प्रकार से पतिव्रता अपने ही पति का चिन्तन करती है। उसी प्रकार सदैव सद्गुरु देव का ध्यान करना चाहिए।

स्वाश्रमं च स्व-जातिं च स्व-कीर्तिं पुष्टि-वर्धनम्।
एतत् सर्वं परित्यज्य गुरुम् एव समाश्रयेत्॥31॥

अपने ब्रह्मचर्याश्रम आदि, औनी जाति, कीर्ति, पदप्रतिष्ठा पालन-पोषण ये सब बातें छोड़कर सद्गुरुदेव का ही पूरी तरह आश्रय लेना चाहिए।

गुरु-वक्त्रे स्थिता विद्या गुरु-भक्त्या च लभ्यते।
त्रैलोक्ये स्फुट-वक्तारो देवर्षि-पितृ-मानवाः॥32॥

जैसे विद्या गुरुदेव के मुख में रहती है और वह विद्या गुरुदेव की भक्ति से ही प्राप्त की जा सकती है। यह बात तीनों लोकों में देव, ऋषि, पितृ और मानवों द्वारा स्पष्ट रूप से कही गई है।

गुकारः चान्धकारो हि रुकारस्-तेज उच्यते।
अज्ञान-ग्रासकं ब्रह्म गुरुरेव न संशयः॥33॥

'गु' शब्द का अर्थ है, अंधकार (अज्ञान) और 'रु' शब्द का अर्थ है प्रकाश या ज्ञान, अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करने वाला जो ब्रह्म रूप प्रकाश है। वही सद्गुरु देव है। इसमें कोई संशय नहीं है।

गुकारः-चान्धकारस्-तु रुकास्-तद्-निरोधकृत्।
अन्धकार-विनाशित्वात् गुरुः इत्यभिधीयते॥34॥

'गु' शब्द का अर्थ जिस प्रकार से अंधकार है। उसको दूर करने वाले 'रु' उसे रोकने वाला है। अतः अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करने वाले को ही सद्‌गुरुदेव कहते हैं।

गुकारः च गुणातीतो रूपातीतो रुकारकः।
गुण-रूप-विहीनत्वात् गुरुः इत्यभिधीयते॥35॥

'गु' कार से गुणों का पता चलता है क्योंकि 'गु' कार ही गुणातीत है। 'रू' कार से ही रूप का पता चलता है। क्योंकि रू कार ही रूपातीत है। गुण और रूप से परे होने के कारण ही 'गुरू' कहलाते है।

गुकारः प्रथमो वर्णो मायादि-गुण-भासकः।
रुकारोऽस्ति परं ब्रह्म माया-भ्रान्ति-विमोचकम्॥36॥

गुरु शब्द का प्रथम अक्षर 'गु' माया आदि गुणों का प्रकाशक है और दूसरा अक्षर 'रू' माया रूपी भ्रम को दूर करने वाला एवं मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले परम ब्रह्म सद्‌गुरु देव ही हैं।

आसनं शयनं वस्त्रं वाहनं भूषणादिकम्।
साधकेन प्रदातव्यं गुरु-सन्तोष-कारणम्॥37॥

गुरु भक्त शिष्य को चाहिए कि सद्‌गुरु देव की प्रसन्नता के लिए आसन, बिस्तर, वस्त्र, वाहन, आभूषण आदि श्री सद्‌गुरु देव को समर्पित करें।

शरीरम् इन्द्रिय-प्राणम् अर्थ-स्वजन-बान्धवान्।
आत्मा-दारादिकं सर्वं सद्‌गुरुभ्यो निवेदयेत्॥38॥

अपना शरीर, इन्द्रिय, प्राण, धन, अपने सेवक-संबंधी आदि

सब कुछ श्री गुरुदेव को अर्पण करना चाहिए, अपने कुटुम्बीजनों, नाते-रिश्तेदारों को सद्‌गुरु देव के बताए मार्ग पर चलने के लिए निवेदन करना चाहिए।

सर्व-श्रुति-शिरो-रत्न-विराजित-पदांबुजम्।
वेदान्तार्थ-प्रवक्तारं तस्मात् संपूजयेद् गुरुम्॥39॥

सद्‌गुरु देव वेदान्त के अर्थों के प्रवक्ता हैं। सर्वश्रेष्ठ रत्नों से सुशोभित चरणकमल वाले उच्च सिहांसन पर विराजमान करके सद्‌गुरु देव की पूजा करनी चाहिए (जिस प्रकार से भगवान श्रीकृष्ण ने सुदामाजी को अपने स्वर्णमण्डित सिंहासन पर बैठाकर धूप, दीप, नैवेद्य और ताम्बूल से अनेक प्रकार से उनकी पूजा की)।

यस्य स्मरण-मात्रेण ज्ञानम् उत्पद्यते स्वयम्।
सः एव सर्व-सम्पत्तिः तस्मात् संपूजयेद् गुरुम्॥40॥

जिनके स्मरण मात्र से ज्ञान अपने-आप ही प्रकट होने लगता है ऐसे सद्-गुरुदेव ही सभी सम्पति के रूप हैं। अतः गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए।

संसार-वृक्षम् आरूढाः पतन्ति नरकार्णवे।
यस्-तान् उद्धरते सर्वान् तस्मै श्रीगुरवे नमः॥41॥

संसार रूपी वृक्ष पर चढ़े हुए लोग नरक रूपी सागर में गिरते हैं। परन्तु सद्‌गुरु देव उन सबका उद्धार करने वाले हैं ऐसे श्रीगुरु को नमस्कार है।

एक एव परो बन्धुर्-विषमे समुपस्थिते।
गुरुः सकल-धर्मात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः॥42॥

जब मनुष्य के सामने कोई विकट परिस्थिति उपस्थित होती है। तब गुरु ही एक परम सखा या परम मित्र है। क्योंकि वे सभी धर्मों के आत्मस्वरूप हैं। ऐसे श्री गुरुदेव को नमस्कार है।

भवारण्य-प्रविष्टस्य दिग्-मोह-भ्रान्त-चेतसः।
येन सन्दर्शितः पन्थाः तस्मै श्रीगुरवे नमः।।43।।

संसार रूपी शिखर में प्रवेश करने के बाद दिग्विमूढ़ की स्थिति में जब कोई मार्ग नहीं दिखाई देता एवं मन भ्रम में फसा होता है, ऐसे समय जिन्होंने मार्ग दिखाया, ऐसे श्री सद्‌गुरु देव को नमस्कार है।

ताप-त्रयाग्नि-तप्तानां अशान्त-प्राणिनां भुवि।
गुरुरेव परा गंगा तस्मै श्रीगुरवे नमः।।44।।

इस पृथ्वी पर त्रिविध ताप (दैहिक, दैविक व भौतिक) रूपी अग्नि से जलने के कारण अशान्त हुए प्राणियों के लिए गुरुदेव ही एक मात्र उत्तम गंगा जी है। जैसे कि गंगा जी को उत्तम तीर्थ माना जाता है, ऐसे ही सद्‌गुरु देव को नमस्कार है।

सप्त-सागर-पर्यन्तं तीर्थ-स्नान-फलं तु यत्।
गुरु-पाद-पयोबिन्दोः सहस्रांशेन तत्-फलम्।।45।।

सात समुद्र पर्यन्त और सात प्रकार के तीर्थों में स्नान करने से जितना फल प्राप्त होता है। उसका हजार गुना फल श्री गुरुदेव के चरणामृत की एक बूंद से प्राप्त होता है।

शिवे रुष्टे गुरुस्-त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।
लब्ध्वा कुलगुरुं सम्यग् गुरुमेव समाश्रयेत्।।46।।

यदि भगवान शंकर अप्रसन्न हो जायें तो सद्‌गुरु देव बचाने वाले है। परन्तु सद्‌गुरु देव रुष्ट हो जाएं तो बचाने वाला कोई नहीं है। अतः श्री गुरुदेव को प्रसन्न करके सदैव उनकी शरण में रहना चाहिए।

गुकारं च गुणातीतं रुकारं रूप-वर्जितम्।
गुणातीतम् अरूपं च यो दद्यात् स गुरुः स्मृतः।।47।।

'गुरु' शब्द का 'गु' अक्षर गुणातीत अर्थ का बोध करता है। 'रु' अक्षर रूप रहित स्थिति का बोध करता है। ये दोनों स्थितियाँ गुणों से ऊपर उठना और अरूपता जो देते हैं, उनको गुरु कहते हैं।

अ-त्रिनेत्रः शिवः साक्षात् द्वि-बाहुश्च हरिः स्मृतः।
योऽचतुर्वदनो ब्रह्मा श्रीगुरुः कथितः प्रिये।।48।।

हे देवी - कहा भी गया है कि गुरु ही त्रिनेत्र न होते हुए भी (दो आंखो वाले) साक्षात् स्वयं शिव ही हैं। दो हाथ वाले होकर श्री हरि भगवान विष्णु हैं और चार मुंह न होते हुए भी (एक मुखवाले) स्वयं ब्रह्मा जी हैं।

देव-किन्नर-गन्धर्वाः पितृ-यक्षास्-तु तुम्बुरुः।
मुनयोऽपि न जानन्ति गुरु-शुश्रूषणे विधिम्।।49।।

देव, किन्नर, गंधर्व, पितृ, यक्ष, ऋषि, तुम्बुरु (इंद्र की सभा के गायक गंधर्व का नाम) और मुनि लोग भी गुरु सेवा की विधि नहीं जानते हैं।

तार्किकाः छान्दसाः चैव देवज्ञाः कर्मठाः प्रिये।
लौकिकास्-ते न जानन्ति गुरु-तत्त्वं निराकुलम्।।50।।

हे प्रिये तर्क करने वाले, वेद को जानने वाले, ज्योतिष को जानने वाले एवं कर्मकाण्ड को जानने वाले पंडित, विद्वानजन तथा लौकिक जन निर्मल गुरु तत्व को नहीं जानते हैं।

महाहंकार-गर्वेण तपोविद्या-बलेन च।
भ्रमन्त्ये-तस्मिन् संसारे घटीयन्त्रं तथा पुनः।।51।।

तप, विद्या, बल, गर्व महाअहंकार के कारण जीवात्मा इस संसार (सागर) के महाजाल में बार-बार रहट के घड़ों की तरह आता-जाता रहता है।

यज्ञिनोऽपि न मुक्ताः स्युः न मुक्ताः योगिनस्तथा।
तापसा अपि नो मुक्ता गुरु-तत्त्वात् पराङ्मुखाः।।52।।

यदि कोई मनुष्य गुरुतत्व से मुख को मोड़ ले तो याज्ञिक होकर भी मुक्ति नहीं पा सकता बिना सद्गुरु देव की कृपा से योगी और तपस्वी भी मुक्त नहीं हो सकते।

न मुक्तास्तु गन्धर्वाः पितृ-यक्षास्तु चारणाः।
ऋषयः सिद्ध-देवाद्याः गुरु-सेवा-पराङ्मुखाः।।53।।

गुरु की सेवा आदि देवता, गंधर्व, पितृ, यक्ष, चारण, ऋषि, सिद्ध आदि भी बहिर मुख हो जाएं तो वह भी मुक्त नहीं होंगे।

इति श्री स्कान्दोत्तरखण्डे उमामहेश्वर संवादे
श्री गुरुगीतायां प्रथमोऽध्यायः

(इस प्रकार श्रीस्कन्द पुराण के उत्तरखण्ड में शिव पार्वती संवाद के अंतर्गत श्री गुरुगीता का प्रथम अध्याय सम्पूर्ण हुआ।)

अथ द्वितीयः अध्यायः

ब्रह्मानन्दं परम-सुखदं केवलं ज्ञान-मूर्तिं
द्वन्द्वातीतं गगन-सदृशं तत्त्वमस्या-दिलक्ष्यम्।
एकं नित्यं विमलम् अचलं सर्वधी-साक्षिभूतम्
भावातीतं त्रिगुण-रहितं सद्गुरुं तं नमामि॥54॥

जो ब्रह्मानन्द स्वरूप हैं। परम सुख देने वाले हैं जो केवल ज्ञान स्वरूप हैं। ज्ञान देने वाले हैं। सुख-दुःख शीत-उष्ण आदि द्वन्दों से रहित है। सद्गुरु देव गगन के समान सूक्ष्म और सर्वव्यापक है। तत्व, रहस्यों आदि महालक्ष्यों को पाना ही अपना लक्ष्य समझते हैं, एक है, नित्य है, मलरहित है। अचल है, सभी बुद्धियों का साक्षी है। भावना से परे है। सत्, रज, तमोगुण तीनों गुणों से रहित हैं, ऐसे श्री सद्गुरु देव को मैं नमस्कार करता हूँ।

गुरूपदिष्ट-मार्गेण मनः-शुद्धिं तु कारयेत्।
अनित्यं खण्डयेत् सर्वं यत् किंचिद् आत्मगोचरम्॥55॥

श्री गुरुदेव के द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलकर अपने मन की शुद्धि करनी चाहिए, जो कुछ भी अनित्य वस्तु अपनी इन्द्रियों के बस में हो जाए उनका निराकरण करना चाहिए।

किमत्र बहुनोक्तेन शास्त्र-कोटि-शतैरपि।
दुर्लभा चित्त-विश्रान्तिः विना गुरुकृपां पराम्॥56॥

यहां ज्यादा कहने से क्या लाभ श्री सद्गुरु देव की परम कृपा के बिना करोड़ों शास्त्रों से भी मन में शान्ति मिलना बहुत दुर्लभ है।

करुणा-खड्ग-पातेन छित्त्वा पाशाष्टकं शिशोः।
सम्यग् आनन्दजनकः सद्गुरुः सोऽभिधियते॥57॥
एवं श्रुत्वा महादेवि गुरु-निन्दां करोति यः।
स याति नरकान् घोरान् यावत् चन्द्रदिवाकरौ॥58॥

श्री सद्गुरु देव अपनी करुणारूपी तलवार के प्रहार से -संशय, दया, भय, संकोच, निन्द्रा, प्रतिष्ठा, कुल का अभिमान और संपत्ति, शिष्य के इन आठों पाशों को काटकर शीतल आनन्द देने वाले को सद्गुरु कहते हैं। ऐसा सुन लेने पर भी जो मनुष्य गुरु की निन्दा करता है, वह मनुष्य जब-तक सूर्य चन्द्र का अस्तित्व रहता है तब तक घोर नरकों में रहता है।

यावत् कल्पान्तको देहस्-तावद् देवि गुरुं स्मरेत्।
गुरुलोपो न कर्त्तव्यः स्वच्छन्दो यदि वा भवेत्॥59॥

हे प्रिये - जब तक इस शरीर में सांस रहती है तब तक श्री गुरुदेव का स्मरण करना चाहिए। (स्वच्छन्द अर्थात् स्वरूप का बोध होने पर भी) शिष्य को सद्गुरुदेव की शरण नहीं छोड़नी चाहिए।

हुं-कारेण न वक्तव्यं प्राज्ञ-शिष्यैः कदाचन।
गुरोः अग्रे न वक्तव्यम् असत्यं तु कदाचन॥60॥

श्री गुरुदेव के समक्ष ज्ञानवान शिष्यों को कभी हुंकार शब्द से नहीं बोलना चाहिए, 'मैंने ऐसा काम किया' और कभी असत्य नहीं बोलना चाहिए।

गुरुं त्वं-कृत्य हुं-कृत्य गुरु-सान्निध्य-भाषणः।
अरण्ये निर्जले देशे संभवेद् ब्रह्मराक्षसः ॥61॥

गुरुदेव के समक्ष जो 'तू' कहकर बोलता है अथवा गुरु के सामने गरजकर बोलता है। वह निर्जन मरुभूमि में ब्रह्मराक्षस होता है।

अद्वैतं भावयेद् नित्यं सर्वावस्थासु सर्वदा।
कदाचिद् अपि नो कुर्याद् अद्वैतं गुरुसन्निधौ॥62॥

सदैव और सभी अवस्थाओं में अद्वैत की भावना करनी चाहिए परन्तु गुरुदेव के साथ कभी अद्वैत की भावना नहीं करनी चाहिए, अर्थात मुझमें और गुरु में कोई अंतर नहीं, ऐसा न सोचे।

दृश्य-विस्मृति-पर्यन्तं कुर्याद् गुरु-पदार्चनम्।
तादृशस्यैव कैवल्यं न च तद्-व्यतिरेकिणः॥63॥

जब तक हमारी आंखों की देखने की स्मृति बनी रहे, तब तक गुरुदेव के पावन चरणारविन्द की पूजा-अर्चना करनी चाहिए, ऐसा करने वाले को ही केवल्यपद की प्राप्ति होती है। इससे विपरीत करने वाले को नहीं होती।

अपि संपूर्ण-तत्त्वज्ञो गुरुत्यागी भवेद् यदा।
भवत्येव हि तस्यान्त-काले विक्षेपम् उत्कटम्॥64॥

सम्पूर्ण तत्वज्ञ पुरुष भी यदि गुरु का त्याग कर दे तो मृत्यु के समय उसे महान व्यथा होती है।

गुरौ सति स्वयं देवि परेषां तु कदाचन।
उपदेशं न वै कुर्यात् तदा चेद् राक्षसो भवेत्॥65॥

हे देवी-गुरु देव के साथ रहने पर तो कभी अपने आप किसी को उपदेश नहीं देना चाहिए, यदि कोई इस प्रकार उपदेश देता है तो वह ब्रह्म राक्षस होता है।

न गुरोः आश्रमे कुर्याद् दुष्पानं परि-सर्पणम्।
दीक्षा-व्याख्या-प्रभुत्वादि गुरोः आज्ञां न कारयेत्॥66॥

गुरु के आश्रम में मदिरा पान नहीं करना चाहिए। घूमना-फिरना नहीं चाहिए, किसी को दीक्षा नहीं देनी चाहिए, व्याख्यान देना और अपना प्रभुत्व नहीं दिखाना चाहिए और गुरु को आदेश देना ये सब कार्य गुरु के स्थान में वर्जित हैं।

नोपाश्रमं च पर्यंकं न च पाद-प्रसारणम्।
नांगभोगादिकं कुर्याद् न लीलाम् अपराम् अपि॥67॥

गुरु के आश्रम में अपना घर और पलंग नही बनाना चाहिए। गुरुदेव के सामने पैर नहीं पसारने चाहिए शरीर के भोग और अन्य लीलाएँ नहीं करनी चाहिए।

गुरूणां सद् असद् वापि यदुक्तं तद् न लंघयेत्।
कुर्वन् आज्ञां दिवारात्रौ दासवद् निवसेद् गुरौ॥68॥

दिन हो या रात हो सदैव गुरु की आज्ञा का पालन करना चाहिए, गुरुदेव की बात सच्ची हो या झूठी उनकी बात का कभी उल्लंघन नहीं करना चाहिए, उनके सान्निध्य में दास के समान बनकर रहना चाहिए।

अदत्तं न गुरोर्-द्रव्यम् उपभुंजीत कर्हिचित्।
दत्तं च रंक-वद् ग्राह्यं प्राणोऽपि एतेन लभ्यते॥69॥

जो वस्तु गुरुदेव ने नहीं दी हो उस वस्तु का उपयोग कभी भी नहीं करना चाहिए गुरुदेव की दी हुई वस्तु को गरीब की तरह ग्रहण करना चाहिए। उससे प्राण को भी वश में किया जा सकता है।

पादुकासन-शय्यादि गुरुणा यद् अभीष्टितम्।
नमस्-कुर्वीत तत्सर्वं पादाभ्यां न स्पृशेत् क्वचित्॥70॥

चरण पादुका, आसन, बिस्तर आदि जो कुछ भी सद्गुरुदेव के उपयोग में आता है। उन सभी वस्तुओं को प्रणाम करना चाहिए, उनको कभी भी पैर से नहीं छूना चाहिए।

गच्छतः पृष्ठतो गच्छेत् गुरुच्छायां न लंघयेत्।
नोल्बणं धारयेद्वेषं नालंकारांस्-ततोल्बणान्॥71॥

चलते समय गुरुदेव के साथ-साथ नहीं चलना चाहिए, उनके पीछे चलना चाहिए, गुरुदेव की परछाई का भी उल्लंघन नहीं करना चाहिए, गुरुदेव के सामने कीमती वेशभूषा, आभूषण आदि को धारण नहीं करना चाहिए।

गुरु-निन्दाकरं दृष्ट्वा धावयेद् अथ वासयेत्।
स्थानं वा तत् परित्याज्यं जिह्वाच्छेदाक्षमो यदि॥72॥

सद्गुरु देव की निन्दा करने वाले को देखकर यदि उसकी जिह्वा काट डालने में समर्थ न हो तो उसे अपने स्थान से भगा देना चाहिए, वह यदि उस स्थान पर ठहरे तो स्वयं उस स्थान का त्याग कर देना चाहिए।

मुनिभिः पन्नगैर्-वापि सुरैर्-वा शापितो यदि।
काल-मृत्यु-भयाद् वापि गुरुः संत्राति पार्वति॥73॥

हे पर्वती- मुनियों, पन्नगों और देवताओं के शाप से तथा काल (यम) के आने पर भी तथा मृत्यु के भय (डर) से भी गुरुदेव अपने शिष्य को बचा सकते है।

विजानन्ति महावाक्यं गुरोः चरण-सेवया।
ते वै संन्यासिनः प्रोक्ता इतरे वेष-धारिणः॥74॥

गुरुदेव के श्री चरणों की सेवा करके जो **महावाक्य (तत् त्वम् असि=वह सू ही है)** का अर्थ भली-भाँति समझ जाते हैं वे ही सच्चे सन्यासी हैं, अन्य तो मात्र वेशधारी हैं।

नित्यं ब्रह्म निराकारं निर्गुणं बोधयेत् परम्।
भासयन् ब्रह्म-भावं च दीपो दीपान्तरं यथा॥75॥

गुरु वे हैं जो सदैव, निर्गुण, निराकार, परम ब्रह्म का ज्ञान देते हैं। जैसे एक दीपक दूसरे दीपक को प्रज्ज्वलित करता है। वैसे ही गुरु भी अपने शिष्य के भीतर ब्रह्मज्ञान प्रकट करते हैं।

गुरु-प्रसादतः स्वात्मनि आत्मा-राम-निरीक्षणात्।
समता-मुक्ति-मार्गेण स्वात्म-ज्ञानं प्रवर्तते॥76॥

श्री सद्‌गुरुदेव की कृपा से ही शिष्य अपने भीतर ही आत्मानन्द प्राप्त करके समता व मोक्ष के मार्ग के के द्वारा ब्रह्मज्ञान को उपलब्ध होता है।

स्फटिके स्फाटिकं रूपं दर्पणे दर्पणो यथा।
तथात्मनि चिदाकारम् आनन्दं सोऽहम् इत्युत॥77॥

जैसे स्फटिक मणि में स्फटिक मणि तथा दर्पण में दपर्ण दिखाई देता है। उसी प्रकार शिष्य भी गुरुदेव की कृपा से आत्मा में जो चित और आनंद दिखाई देता है वह मै हूँ। ऐसा समझ पाता है।

अंगुष्ठमात्रं पुरुषं ध्यायेत् च चिन्मयं हृदि।
तत्र स्फुरति यो भावः शृणु तत् कथयामि ते॥78॥

हृदय में अंगुष्ठ परिमाण वाले चैतन्य पुरुष का ध्यान करना चाहिए, वहां जो भाव अंकुरित होता है। वह मैं तुम्हें कहता हूँ। उसे सुनो।

अजोऽहम् अमरोऽहम् च ह्यनादि-निधनोस्मि अहम्।
अविकारः चिदानन्दो ह्यणीयान् महतो महान्॥79॥

मैं अजन्मा हूँ, मैं अमर हूँ, मेरा आदि, मध्य, अन्त नहीं है। (आदि-मध्य-अन्तहीन) मैं निर्विकार हूँ। मैं चिदानन्द हूँ। मैं निर्गुण हूँ। मैं अणु से भी छोटा हूँ। मैं महान से भी महामहान हूँ।

अपूर्वम् अपरं नित्यं स्वयं ज्योतिर्-निरामयम्।
विरजं परमाकाशं ध्रुवम् आनन्दम् अव्ययम्॥80॥
अगोचरं तथाऽगम्यं नाम-रूप-विवर्जितम्।
निःशब्दं तु विजानीयात् स्वभावाद् ब्रह्म पार्वति॥81॥

हे देवी- ब्रह्म को स्वभाव से ही पहले जिससे पूर्व कोई नहीं हैं ऐसा अद्वितीय, नित्य, ज्योतिस्वरूप, निरामय, निर्मल, परम आकाश स्वरूप, अचल, आनन्द स्वरूप, अविनाशी अगम्य अगोचर, नाम और रूप से रहित निःशब्द जानना चाहिए।

यथा गन्ध-स्वभावत्वं कर्पूर-कुसुमादिषु।
शीतोष्ण-त्वस्वभावत्वं तथा ब्रह्मणि शाश्वतम्॥82॥

जिस प्रकार कपूर, फूल इत्यादि में गन्धत्व (सुगन्ध) का स्वभाव होता है। जैसे अग्नि का स्वभाव उष्णता है। यदि अग्नि को प्यार से भी छुआ जाए तो वह जलाती है। उसी प्रकार जल में शीतलता स्वभाविक है। इसलिए ब्रह्म में शाश्वतता भी स्वभाव सिद्ध है।

यथा निज-स्वभावेन कुंडल-कटकादयः।
सुवर्णत्वेन तिष्ठन्ति तथाऽहं ब्रह्म शाश्वतम्॥83॥

जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि आभूषण स्वभाव से ही सुवर्ण हैं। उसी प्रकार मैं स्वभाव से ही शाश्वत ब्रह्म हूँ।

स्वयं तथाविधो भूत्वा स्थातव्यं यत्र कुत्रचित्।
कीटो भृंग इव ध्यानात् यथा भवति तादृशः॥84॥

स्वयं वैसा होकर किसी-न किसी स्थान में रहना जैसे भृंगी एक कीड़े को ले जाकर दीवार पर अपने रहने की जगह बंद कर देता है और वह कीड़ा उसका चिन्तन करते-करते ही अपने पहले शरीर के त्याग किये बिना ही, भृंगी कीड़ा बन जाता है।

गुरोर्-ध्यानेनैव नित्यं देही ब्रह्ममयो भवेत्।
स्थितश्च यत्र कुत्रापि मुक्तोऽसौ नात्र संशयः॥85॥

सदैव सद्गुरुदेव का ध्यान करने से ही मनुष्य ब्रह्ममय हो जाता है। वह किसी भी स्थान में रहता हो फिर भी मुक्त ही है। इसमें कोई संशय नहीं है। क्योंकि यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि से परे संयम, मर्यादा उसका स्वभाव बन जाता है।

ज्ञानं वैराग्यम् ऐश्वर्यं यशः श्री समुदाहृतम्।
षड्गुणैश्वर्य-युक्तो हि भगवान् श्रीगुरुः प्रिये॥86॥

भगवान शिव कहते हैं- हे देवी भगवत स्वरूप श्री गुरुदेव ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, यश, लक्ष्मी और मधुर वाणी ये छः गुण रूप ऐश्वर्य से संपन्न होते हैं। इसलिए उन्हें भगवद् स्वरूप ही मानना चाहिए।

गुरुः शिवो गुरुर्-देवो गुरुर्बन्धुः शरीरिणाम्।
गुरुरात्मा गुरुर्-जीवो गुरोर् अन्यद् न विद्यते।।87।।

मनुष्यों के लिए गुरु ही शिव है। गुरु ही देव है, गुरु ही नाते-रिश्तेदार है। गुरु ही आत्मा है। गुरु ही जीव है। गुरु के सिवा अन्य कुछ भी नहीं है। इसलिए गुरु को सामान्य मनुष्य न समझ कर उन्हें साक्षात् शिव, देवता परम बान्धव, मित्र, हितकारी मानकर उसी की शरण ग्रहण करनी चाहिए।

एकाकी निस्पृहः शान्तः चिंतासूयादि-वर्जितः।
बाल्य-भावेन यो भाति ब्रह्मज्ञानी स उच्यते।।88।।

अकेला, कामना रहित, शान्त चिन्ता रहित, ईर्ष्या रहित और बालक की तरह जो सुशोभित है वह ब्रह्मज्ञानी कहलाता है। वह बालक की तरह निर्दोष निर्विकार छल कपट से रहित होता है। वह किसी से ईर्ष्या नहीं करता, शिकायत नहीं करता ब्रह्मज्ञानी के ये ही लक्षण हैं।

न सुखं वेद-शास्त्रेषु न सुखं मंत्र-यंत्रके।
गुरोः प्रसादाद् अन्यत्र सुखं नास्ति महीतले।।89।।

वेदों और शास्त्रों में सुख नहीं है, मंत्र-यंत्र में सुख नहीं है। जैसे वेदों और शास्त्रों को जब तक सद्गुरुदेव न बताएं तब तक यह समझ में नहीं आते क्योंकि इस पृथ्वी पर गुरुदेव की कृपा प्रसाद के शिवा अन्यत्र कहीं भी सुख नहीं है।।89।।

चार्वाक-वैष्णवमते सुखं प्राभाकरे न हि।
गुरोः पादान्तिके यद्-वत् सुखं वेदान्त-सम्मतम्।।90।।

गुरुदेव के श्री चरणों में जो वेदान्त निर्दिष्ट सुख है। वह न तो चार्वाक मत में और न वैष्णव मत में और न ही कपिलाचार्य के सांख्यवाद में है।

न तत् सुखं सुरेन्द्रस्य न सुखं चक्र-वर्तिनाम्।
यत् सुखं वीतरागस्य मुनेरेकान्त-वासिनः।।91।।

एकान्तवासी, वीतराग मुनि को जो सुख मिलता है। वह सुख न तो इन्द्र को और न चक्रवर्ती राजाओं को मिलता है (क्योंकि इन्द्र भी काम वासनाओं से ग्रस्त है। उसे भी राक्षसों की चुनौती बनी रहती है। चक्रवर्ती राजा भी कामनाओं के कारण दुःखी रहता है।) सुखी तो केवल वे मुनि हैं जो एकान्त में रहते हैं। जिनकी सभी कामनाएँ छूट चुकी हैं।

नित्यं ब्रह्म-रसं पीत्वा तृप्तो यः परमात्मनि।
इन्द्रं च मन्यते रंकं नृपाणां तत्र का कथा।92।।

हमेशा ब्रह्म रस का पान करके जो परमात्मा में सन्तुष्ट हो गया है। वह ऋषि इन्द्र को भी गरीब मानता है तो उन चक्रवर्ती राजाओं की तो बात ही क्या है?

यतः परमकैवल्यं गुरुमार्गेण वै भवेत्।
गुरुभक्ति-रतिः कार्या सर्वदा मोक्ष-कांक्षिभिः।।93।।

मोक्ष की इच्छा करने वालों को गुरु भक्ति खूब करनी चाहिए भूलकर भी गुरु की कोई बात नहीं काटनी चाहिए क्योंकि गुरुदेव के द्वारा ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।

एक एव अद्वितीयोऽहं गुरु-वाक्येन निश्चितः।
एवम् अभ्यस्यता नित्यं न सेव्यं वै वनान्तरम्।।94।।

गुरुदेव के वाक्य की सहायता से जिसने ऐसा निश्चय कर लिया है कि मैं एक और अद्वितीय हूँ और गुरु आज्ञा पालन में जो नित्यरत है, उसके लिए अन्य वनवास का सेवन आवश्यक नहीं है।

अभ्यासाद् निमिषेणैव समाधिम् अधिगच्छति।
आजन्म-जनितं पापं तत्क्षणाद् एव नश्यति।।95।।

क्योंकि अभ्यास से एक पल में समाधि लग जाती है और उसी पल इस जन्म के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि गुरुदेव के उपदेश के बिना आत्मबोध सम्भव नहीं है।

गुरुर्-विष्णुः सत्त्वमयो राजसः चतुराननः।
तामसो रुद्ररूपेण सृजत्यवति हन्ति च।।96।।

गुरुदेव ही सत्वगुणी होकर विष्णु रूप से जगत का पालन करते है। रजोगुणी होकर ब्रह्म रूप से जगत का सृजन करते हैं और तमोगुणी होकर शंकर रूप से जगत का संहार करते हैं।

तस्यावलोकनं प्राप्य सर्व-संग-विवर्जितः।
एकाकी निःस्पृहः शान्तः स्थातव्यं तत्-प्रसादतः।।97।।

उनका (गुरुदेव का) दर्शन पाकर उनके कृपा प्रसाद से सभी प्रकार की आसक्ति छोड़कर एकाकी, निःस्पृह और शान्त होकर रहना चाहिए। साधक को सभी प्रकार की सांसारिक कामनाएँ वासनाएँ, आसक्ति, मोह, ममता आदि का त्याग कर देना चाहिए।

सर्वज्ञ-पदम् इत्याहुर्-देही सर्वमयो भुवि।
सदाऽनन्दः सदा शान्तो रमते यत्र कुत्रचित्॥98॥

जो जीव आत्मा इस संसार में सर्वमय, आनन्दमय और शान्त होकर सभी स्थानों पर विचरता है। उस जीव आत्मा को सर्वज्ञ कहते हैं, ऐसा ज्ञानी ही सर्वज्ञ होता है, वही शान्त और आनंदमय जीता है।

यत्रैव तिष्ठते सोऽपि स देशः पुण्य-भाजनः।
मुक्तस्य लक्षणं देवि तवाग्रे कथितं मया॥99॥

भगवान शंकर ने कहा ऐसा पुरुष जहां रहता है वह स्थान पुण्य तीर्थ है। जैसे हरिद्वार में गंगा जी को पुण्य तीर्थ कहा गया है। हे प्रिये तुम्हारे समक्ष मैंने मुक्तपुरुष का लक्षण कहा।

यद्यप्यधीता निगमाः षडंगा आगमाः प्रिये।
अध्यात्मादीनि शास्त्राणि ज्ञानं नास्ति गुरुं विना॥100॥

हे देवी मनुष्य चाहे चारों वेदों को पढ़ ले, वेद के अंग शिक्षा, व्याकरण, छन्द, निरूक्त, ज्योतिष, कल्प इन छः अंगों को पढ़ ले, आध्यात्म शास्त्र आदि अन्य सभी शास्त्र पढ़ ले फिर भी वह सद्‌गुरुदेव के बिना ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि सब के ज्ञानदाता केवल सद्‌गुरु ही है। उनकी शरण में जाना चाहिए।

शिव-पूजा-रतो वापि विष्णु-पूजारतोऽथवा।
गुरुतत्त्व-विहीनः चेत् तत् सर्वं व्यर्थमेव हि॥101॥

भगवान शिव की पूजा में रत हो या भगवान विष्णु की पूजा में रत हो, लेकिन गुरुतत्व के ज्ञान से रहित हो तो वह सब व्यर्थ है।

सर्वं स्यात् सफलं कर्म गुरु-दीक्षा-प्रभावतः।
गुरु-लाभात् सर्व-लाभो गुरुहीनस्तु बालिशः॥102॥

गुरुदेव की दीक्षा के प्रभाव से जीव आत्मा के सभी कर्म सफल होते हैं और कुकर्म से मुक्ति होती है। गुरु देव की संप्राप्ति रूपी परम लाभ से अन्य सभी लाभ मिलते हैं। जिस मनुष्य का गुरु नहीं है, वह मूर्ख है।

तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन सर्व-संग-विवर्जितः।
विहाय शास्त्र-जालानि गुरुमेव समाश्रयेत्॥103॥

इसलिए सभी प्रकार के प्रयत्न की आसक्तियों को छोड़कर अनासक्त होकर शास्त्र के मायाजाल को छोड़कर इस संसार रूपी माया को त्यागकर सदैव गुरुदेव की शरण लेनी चाहिए।

ज्ञान-हीनो गुरुस्-त्याज्यो मिथ्यावादी विडंबकः।
स्व-विश्रान्तिं न जानाति परश्शान्तिं करोति किम्॥104॥

ज्ञान रहित, मिथ्या बोलने वाले और दिखावट करने वाले गुरु का त्याग कर देना चाहिए क्योंकि जो अपनी ही शान्ति पाना नहीं जानता वह दूसरों को क्या शान्ति दे सकेगा।

शिलायाः किं परं ज्ञानं शिला-संघ-प्रतारणे।
स्वयं तर्तुं न जानाति परं निस्तारयेत् कथम्॥105॥

हे देवी जैसे पत्थरों के सूमह को तैराने का ज्ञान पत्थर में कहां से हो सकता है। जो खुद तैरना नहीं जानता वह दूसरे को क्या तैराएगा? जिसे स्वयं तैरना नहीं आता वह दूसरे को डूबने से कैसे बचा सकता है।

न वन्दनीयास्-ते कष्टं दर्शनाद् भ्रान्ति-कारकाः।
वर्जयेत् तान् गुरून् दूरे धीरान् एव समाश्रयेत्॥106॥

जो गुरु अपने दर्शन मात्र से शिष्य को भ्रान्ति में डालता है। ऐसे गुरु को प्रणाम नहीं करना चाहिए, इतना ही नहीं, दूर से ही उसका त्याग कर देना चाहिए, ऐसी स्थिति में धैर्यवान गुरु का आश्रय लेना चाहिए क्योंकि धैर्यवान गुरु दिखावा नहीं करता। वह शान्त होता है। ऐसे गुरु की ही खोज करनी चाहिए।

पाखण्डिनः पाप-रता नास्तिका भेद-बुद्धयः।
स्त्री-लम्पटा दुराचाराः कृतघ्ना बक-वृत्तयः॥107॥

हे देवी-पाखण्डी, पाप से रत, नास्तिक, भेद बुद्धि उत्पन्न करने वाला स्त्रीलम्पट, दुराचारी, एहसान फरामोश बगुले की तरह ठगने वाला, (जैसे बगुला पानी में आंख बन्द करके एक पैर पर खड़ा होकर पाखण्ड करता है और मछली के आते ही वह मछली को खा लेता है।) ऐसे को गुरु नहीं बनाना चाहिए।

कर्म-भ्रष्टाः क्षमा-नष्टाः निन्द्य-तर्कैश्च वादिनः।
कामिनः क्रोधिनश्-चैव हिंस्राश्-चंडाः शठास्-तथा॥108॥

कर्म से भ्रष्ट, क्षमा रहित, निन्दनीय तर्कों से वाद-विवाद करने वाले, कामवासनाओं से ग्रस्त, क्रोधी, हिंसक, उग्र स्वभाव वाले तथा दुष्टों को कभी गुरु नहीं बनाना चाहिए (वे साधक को भी अपने साथ नरक में ले जाते हैं।)

ज्ञान-लुप्ता न कर्तव्या महापापास्-तथा प्रिये।
एभ्यो भिन्नो गुरुः सेव्य एक-भक्त्या विचार्य च॥109॥

जो स्वयं अपने ज्ञान के अनुसार ही सदाचरण से जीवन निर्वाह करने वाला हो, जो शिष्य को सद्मार्ग पर ला सके, ऐसा विचार करके ऊपर दिए हुए लक्षणों से भिन्न लक्षणों वाले गुरु की एकनिष्ठ भक्ति से सेवा करनी चाहिए।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं धर्मसारं मयोदितम्।
गुरुगीता-समं स्तोत्रं नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥110॥

गुरुगीता के समान अन्य कोई स्त्रोत्र नहीं है, गुरु के समान अन्य कोई तत्व नहीं है। समग्र धर्म का यह सार मैंने कहा है। केवल गुरु ही सभी धर्मों का सार है। यह सत्य है। सत्य है और बार-बार सत्य है॥110॥

अनेन यद् भवेद् कार्यं तद् वदामि तव प्रिये।
लोकोपकारकं देवि लौकिकं तु विवर्जयेत्॥111॥

हे पार्वती! इस गुरुगीता का पाठ करने से जो कर्म सिद्ध होता है। वह अब कहता हूँ-हे देवी! लोगों के लिए यह उपकारक है। मात्र लौकिक का त्याग करना चाहिए। मनुष्य की जो कामनाएं आसक्ति रूप हैं, उनका त्याग करना चाहिए, इच्छाएँ और अपेक्षाएँ हैं उनका त्याग करना चाहिए, गुरुगीता ही लोगों पर उपकार कर सकती है, गुरुगीता से बढ़कर कोई ग्रंथ नहीं है।

लौकिकाद् धर्मतो याति ज्ञान-हीनो भवार्णवे।
ज्ञानभावे च यत् सर्वं कर्म निष्कर्म शाम्यति॥112॥

जो कोई इसका उपयोग लौकिक कार्य के लिए करेगा वह ज्ञानहीन होकर संसार रूपी सागर में गिरेगा(वह इन संसार रूपी बन्धनों से कभी मुक्त नहीं हो सकता)। ज्ञान भाव से जिस

किसी कर्म में इसका उपयोग किया जाएगा वह कर्म निष्कर्म में परिणत होकर शान्त हो जाएगा।

इमां तु भक्तिभावेन पठैद् वै शृणुयाद् अपि।
लिखित्वा यत् प्रसादेन तत्सर्वं फलम् अश्नुते॥113॥

भक्ति-भाव से जो गुरुगीता का पाठ करता है और सुनता है, लिखता है, वह साधक सब फल भोगता है और जो अन्य कर्मों से दुर्लभ है।

गुरुगीताम् इमां देवि हृदि नित्यं विभावय।
महाव्याधिगतैर्-दुखैः सर्वदा प्रजपेत् मुदा॥114॥

भगवान शिव पार्वती से कहते है-हे देवी इस गुरुगीता को नित्यभाव पूर्वक हृदय में धारण करो, महाव्याधिवाले दुःखी लोगो को सदा आनंद से इसका जप करना चाहिए।

गुरुगीताक्षरैकैकं मन्त्रराजम् इदं प्रिये।
अन्ये च विविधा मन्त्राः कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥115॥

हे देवी गुरुगीता का एक-एक अक्षर मन्त्रराज है अन्य जो विविध मंत्र है, वे इसका सोलहवां भाग भी नहीं, इसलिए इसका सदैव जप करते रहना चाहिए।

अनन्तफलम् आप्नोति गुरुगीता-जपेन तु।
सर्वपापहरा देवि सर्व-दारिद्र्य-नाशिनी॥116॥

हे प्रिये-गुरुगीता के जप से अनन्त फल मिलता है। गुरुगीता सभी पापों को हरने वाली और सभी प्रकार की दरिद्रता का नाश करने वाली है।

अकाल-मृत्यु-हन्त्री च सर्व-संकट-नाशिनी।
यक्ष-राक्षस-भूतादि-चौर-व्याघ्र-विघातिनी॥117॥

यह गुरुगीता, इसका प्रतिदिन पाठ करने वाले की अकाल मृत्यु को रोकती है। सब संकटों का नाश करती है यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच, चोर और शेर आदि का घात करती है।

सर्वोपद्रव-कुष्ठादि-दुष्ट-दोष-निवारिणी।
यत् फलं गुरु-सान्निध्यात् तत्फलं पठनाद् भवेत्॥118॥

गुरुगीता सब प्रकार से उपद्रवों कष्ट आदि दुष्ट रोगों और दोषों मानसिक रोग, शारीरिक पीड़ा (दुःख) सभी प्रकार के रोगों तथा दोषों का निवारण करने वाली है। श्री सद्गुरुदेव के पावन सान्निध्य से जो फल मिलता है। वह फल इस गुरुगीता के पाठ से मिलता है।

महाव्याधि-हरा सर्व-विभूतेः सिद्धिदा भवेत्।
अथवा मोहने वश्ये स्वयमेव जपेत् सदा॥119॥

इस गुरुगीता का पाठ करने से महाव्याधि दूर होती है। सभी प्रकार के ऐश्वर्य तथा सिद्धियों की प्राप्ति होती है। यदि कोई सम्मोहन, मारण, उच्चाटन अथवा वशीकरण में बंधा है तो उसे गुरुगीता के मंत्रों का जाप विधि विधान के साथ स्वयं करना चाहिए।

मोहनं सर्वभूतानां बन्ध-मोक्ष-करं परम्।
देवराज्ञां प्रियकरं राजानं वशम् आनयेत्॥120॥

इस गुरुगीता का पाठ करने वाले पर सभी प्राणी मोहित हो जाते है, बंधन में बंधे हुए लोगों को मुक्ति मिल जाती है। ऐसा

व्यक्ति देवराज इन्द्र को भी प्रिय होता है और राजा उसके वश में होता है। राजा भी ऐसे व्यक्ति को सम्मान देता है।

मुख-स्तम्भ-करं चैव गुणानां च विवर्धनम्।
दुष्कर्म-नाशनं चैव तथा सत्-कर्म-सिद्धिदम्॥121॥

गुरुगीता का पाठ शत्रु का मुख बंद करने वाला है। पाठक के गुणों को बढ़ाने वाला है। दुष्कर्मों का नाश करने वाला है और सत्कर्म में सिद्धि देने वाला है।

असिद्धं साधयेत् कार्यं नव-ग्रह-भयापहम्।
दुःस्वप्न-नाशनं चैव सुस्वप्न-फलदायकम्॥122॥

इसका पाठ असाध्य कार्यों की सिद्धि कराता है। नवग्रहों के दोष को हरता है। दुःस्वभाव का नाश करता है और सुस्वप्न के फल की प्राप्ति कराता है।

मोह-शान्ति-करं चैव बन्ध-मोक्ष-करं परम्।
स्वरूप-ज्ञान-निलयं गीताशास्त्रम् इदं शिवे॥123॥

भगवान शिव पार्वती से कहते हैं- हे शिवे यह गुरु गीता एक शास्त्र है। यह गुरुगीता रूपी शास्त्र मोह को शान्त करने वाला है। इसके नित्य पाठ करने से मोह आसक्ति एवं कामनाएँ शान्त हो जाती हैं।

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चयम्।
नित्यं सौभाग्यदं पुण्यं तापत्रयकुलापहम्॥124॥

जीवात्मा जो-जो अभिलाषा करके इस गुरुगीता का पाठन या चिन्तन करता है, उसे वह अभिलाषा निश्चय ही प्राप्त होती है। यह गुरुगीता नित्य सौभाग्य और पुण्य प्रदान करने वाली तथा

तीनों तापों (दैविक, दैहिक, भौतिक) का शमन करने वाली है।

सर्व-शान्ति-करं नित्यं तथा वन्ध्या-सुपुत्रदम्।
अवैधव्य-करं स्त्रीणां सौभाग्यस्य विवर्धनम्॥125॥

यह गुरुगीता सब प्रकार की शान्ति प्रदान करने वाली, वन्ध्या (बाझ) स्त्री को सुपुत्र देने वाली, सधवा स्त्रियों के वैधव्य का निवारण करने वाली और सौभाग्य की वृद्धि करने वाली है।

आयुरारोग्यम् ऐश्वर्यं पुत्र-पौत्र-प्रवर्धनम्।
निष्काम-जापी विधवा पठेद् मोक्षम् अवाप्नुयात्॥126॥

यह गुरुगीता आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य और पुत्र-पौत्रादि की वृद्धि करने वाली है, कोई विधवा निष्काम भाव से इसका जप-पाठ करे तो उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अवैधव्यं सकामा तु लभते चान्य-जन्मनि।
सर्वदुःखभयं विघ्नं नाशयेत् तापहारकम्॥127॥

यदि विधवा सकाम होकर जप करे तो अगले जन्म में उसको संताप हरने वाला सौभाग्य प्राप्त होता है। उसके सब दुःख, भय, विघ्न और सन्तापों का नाश होता है।

सर्व-पाप-प्रशमनं धर्म-कामार्थ-मोक्षदम्।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्॥128॥

इस गुरुगीता का पाठ सब पापों का शमन करता है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार प्रकार के पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है तथा पाठक के सभी पापों का शमन होकर वह परम पवित्र हो जाता है। इस पाठ से जो जो आकांक्षाएँ की जाती है। वे अवश्य ही पूर्ण होती हैं।

लिखित्वा पूजयेद् यस्तु मोक्ष-श्रियम् अवाप्नुयात्।
गुरुभक्तिः विशेषेण जायते हृदि सर्वदा॥129॥

यदि कोई इस गुरुगीता को लिखकर उसकी पूजा करे तो उसे लक्ष्मी तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है और विशेष कर उसके हृदय में सदा सर्वदा गुरुभक्ति उत्पन्न होती रहती है।

जपन्ति शाक्ताः सौराश्च गाणपत्याः च वैष्णवाः।
शैवाः पाशुपताः सर्वे सत्यं सत्यं न संशयः॥130॥

शक्ति के उपासक, सूर्य के उपासक गणपति के उपासक, शिव के उपासक और पशुपति के उपासक सभी मतवादी इस गुरुगीता का पाठ करते रहते हैं। यह सत्य है, सत्य है, इसमे कोई संदेह नहीं है।

जपं हीनासनं कुर्वन् हीन-कर्माफल-प्रदम्।
गुरुगीतां प्रयाणे वा संग्रामे रिपु-संकटे॥131॥

बिना आसन के जप नीच कर्म हो जाता है व निष्फल हो जाता है किंतु यात्रा में, युद्ध में, शत्रुओं के उपद्रव में भी गुरुगीता का जप-पाठ करने से विजय मिलती है।

जपन् जयम् अवाप्नोति मरणे मुक्ति-दायिका।
सर्व-कर्माणि सिद्ध्यन्ति गुरुपुत्रे न संशयः॥132॥

मरण काल अर्थात मरते समय यदि गुरुगीता का स्मरण किया जाए तो मोक्ष की प्राप्ति होती है। गुरु के पुत्र के समान शिष्य के सभी कार्य पूर्ण होते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है।

गुरु-मंत्रो मुखे यस्य तस्य सिद्ध्यन्ति नान्यथा।
दीक्षया सर्व-कर्माणि सिद्ध्यन्ति गुरु-पुत्रके॥133॥

जिसके मुख में गुरुमंत्र है उसके सब कर्म सिद्ध होते हैं। दूसरे के नहीं, दीक्षा के कारण 'पुत्र के समान शिष्य' के सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं।

भव-मूल-विनाशाय चाष्ट-पाश-निवृत्तये।
गुरु-गीताम्भसि स्नानं तत्त्वज्ञः कुरुते सदा॥134॥

तत्वज्ञ पुरुष रूपी वृक्ष की जड़ नष्ट करने के लिए और आठों प्रकार के बन्धन (संशय, दया, भय, संकोच, निन्दा, प्रतिष्ठा, कुलाभिमान और सम्पत्ति) की निवृत्ति करने के लिए गुरु गीता रूपी गंगा में सदा स्नान करते रहना चाहिए।

सर्व-शुद्धः पवित्रोऽसौ स्वभावाद् यत्र तिष्ठति।
तत्र देवगणाः सर्वे क्षेत्रपीठे चरन्ति च॥135॥

जो स्वभाव से ही सर्वदा शुद्ध और पवित्र हैं ऐसे ब्रह्मज्ञानी महापुरुष जहाँ निवास करते हैं। वह तीर्थ बन जाता है। ऐसे तीर्थ में सभी देवी-देवता विचरण करते है।

आसनस्था शयाना वा गच्छन्तः तिष्ठन्तोऽपि वा।
अश्वारूढाः गजारूढाः सुषुप्ता जाग्रतोऽपिवा॥136॥

आसन पर बैठे हुए या लेटे हुए खड़े रहते या चलते हुए हाथी या घोड़े पर सवार हुए जाग्रतावस्था में या (निद्रावस्था) सुषुप्तावस्था में भी साधक को गुरुगीता का जप-पाठ करते रहना चाहिए।

शुचिभूता ज्ञानवन्तो गुरुगीतां जपन्ति ये।
तेषां दर्शन-संस्पर्शात् पुनर्जन्म न विद्यते॥137॥

जो पवित्र ज्ञानवान् मनुष्य इस गुरुगीता का जप करते हैं। उनके दर्शन और स्पर्श से पुनर्जन्म नहीं होता, ऐसे व्यक्ति के दर्शनों का भी सौभाग्य समझना चाहिए।

कुश-दूर्वासने देवि ह्यासने शुभ्र-कम्बले।
उपविश्य ततो देवि जपेद् एकाग्रमानसः॥138॥

हे पार्वती- गुरुगीता का जप करते समय शिष्य को कुश या दूर्वा आसन पर सफेद कंबल बिछाकर अथवा पीले ऊनी आसन पर बैठकर एकाग्र चित्त से इस गुरुगीता का जप करना चाहिए।

शुक्लं सर्वत्र वै प्रोक्तं वश्ये रक्तासनं प्रिये।
पद्मासने जपेद् नित्यं शान्ति-वश्य-करं परम्॥139॥

सामान्यतया पीला या सफेद ऊनी आसन उचित है। क्योंकि सफेद या पीला रंग शीतलता का प्रतीक है। परन्तु वशीकरण में लाल आसन आवश्यक है, हे प्रिये शान्ति की प्राप्ति के लिए या वशीकरण मे नित्य पद्मासन में बैठकर जप करें तो अच्छा है।

वस्त्रासने च दारिद्र्यं पाषाणे रोग-संभवः।
मेदिन्यां दुःखम् आप्नोति काष्ठे भवति निष्फलम्॥140॥

कपड़े के आसन पर बैठकर जप करने से द्ररिद्रता आती है। पत्थर के आसन पर रोग, जमीन (पृथ्वी) पर बैठकर जप करने से दुःख आता है और लकड़ी के आसन पर किए हुए जप निष्फल होते हैं। अतः बिना विधि विधान से किया गया कार्य कभी सफलता नहीं देता।

कृष्णाजिने ज्ञान-सिद्धिः मोक्ष-श्रीः व्याघ्र-चर्मणि।
कुशासने ज्ञान-सिद्धिः सर्व-सिद्धिस्तु कम्बले॥141॥

काले मृगचर्म और दर्भासन पर बैठकर जप करने से ज्ञान की सिद्धि होती है। व्याघ्र चर्म पर जप करने से मुक्ति होती है। कुशा के आसन पर ज्ञानसिद्धि होती है और कंबल के आसन पर तो सर्वसिद्धि होती है।

आग्नेय्यां कर्षणं चैव वायव्यां शत्रु-नाशनम्।
नैर्ऋत्यां दर्शनं चैव ईशान्यां ज्ञानम् एव च॥142॥

पूर्व और दक्षिण के बीच अग्निकोण की ओर मुख करके जप-पाठ करने से आकर्षण, उत्तर और पश्चिम के बीच वायव्य कोण की ओर मुख करके जप-पाठ करने से शुत्र का नाश, दक्षिण और पश्चिम के बीच नैर्ऋत्य कोण की तरफ मुख करके भगवान के दर्शन, उत्तर-पूर्व के बीच ईशान कोण की ओर मुख करके बैठने से ज्ञान व सर्वगुणों की प्राप्ति होती है।

उदङ्मुखः शान्ति-जाप्ये वश्ये पूर्व-मुखस्-तथा।
याम्ये तु मारणं प्रोक्तं पश्चिमे च धनागमः॥143॥

उत्तर दिशा की ओर मुख करके जप पाठ करने से शान्ति, पूर्व दिशा की ओर वशीकरण दक्षिण दिशा की ओर मारण-मंत्र सिद्ध होता है और पश्चिम दिशा की ओर मुख करके जप-पाठ करने से धन की प्राप्ति होती है।

इति श्री-स्कान्दोत्तर-खण्डे उमामहेश्वर-संवादे
श्री-गुरु-गीतायां द्वितीयः अध्यायः

(इस प्रकार श्री स्कन्दपुराण के उत्तरखण्ड में शिव पार्वती संवाद में श्री गुरुगीता का दूसरा अध्याय समाप्त हुआ।)

अथ तृतीयः अध्यायः

शिव उवाच

अथ काम्य-जप-स्थानं कथयामि वरानने।
सागरान्ते सरित्-तीरे तीर्थे हरि-हरालये॥144॥

शिव बोले-हे सुमुखी, अब सकामियों के लिए जप करने के स्थानों का वर्णन करता हूँ। सकामियों के लिए सागर या नदी के तट पर, तीर्थ, शिवालय या विष्णु के मन्दिर जैसे स्थान जप के लिए उपयुक्त हैं।

शक्ति-देवालये गोष्ठे सर्व-देवालये शुभे।
वटस्य धात्र्या मूले वा मठे वृन्दावने तथा॥145॥

देवी के मन्दिर में, गौशाला में, सभी प्रकार के शुभ देवालयों में, वटवृक्ष या आँवले के पेड़ के नीचे, मठ में व तुलसीवन जैसे स्थान सकामियों के जप के लिए उपयुक्त हैं।

पवित्रे निर्मले देशे नित्यानुष्ठानतोऽपि वा।
निर्वेदनेन मौनेन जपम् एतत् समारभेत्॥146॥

पवित्र निर्मल स्थान में प्रतिदिन अनुष्ठान के रूप में अनासक्त रहकर मौनपूर्वक इसके जप का अनुष्ठान आरम्भ करना चाहिए।

जाप्येन जयम् आप्नोति जप-सिद्धिं फलं तथा।
हीन-कर्म त्यजेत् सर्वं गर्हित-स्थानम् एव च॥147॥

जप से जय प्राप्त होती है तथा जप की सिद्धि रूप फल मिलता है। जपानुष्ठान में सब नीच कर्म और निन्दित स्थान जहाँ

झूठ, कपट, छल, प्रपंच, निन्दा हों, ऐसे स्थानों का त्याग करना चाहिए।

शमशाने बिल्व-मूले वा वट-मूलान्तिके तथा।
सिद्ध्यन्ति कानके मूले चूतवृक्षस्य सन्निधौ॥148॥

श्मशान में, बेल के पेड़ के नीचे, वटवृक्ष के नीचे, या (कनक) धतूरे के वृक्ष के नीचे और आम के पेड़ के पास जप करने से सिद्धि जल्दी प्राप्त होती है।

आकल्प-जन्म-कोटीनां यज्ञ-व्रत-तपः क्रियाः।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरु-संतोष-मात्रतः॥149॥

हे देवी कल्प पर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ ये सब गुरुदेव के संतोष मात्र से सफल हो जाते हैं, क्योंकि इन सबकी सही विधि सद्गुरु देव ही जानते हैं।

मंद-भाग्या ह्यशक्ताश्च ये जना नानुमन्वते।
गुरु-सेवासु विमुखाः पच्यन्ते नरकेऽशुचौ॥150॥

भाग्यहीन, शक्तिहीन और गुरुसेवा से विमुख जो लोग इस उपदेश को नहीं मानते, वे घोर नरक में पड़ते हैं।

विद्या धनं बलं चैव तेषां भाग्यं निरर्थकम्।
येषां गुरु-कृपा नास्ति अधो गच्छन्ति पार्वति॥151॥

जिनके ऊपर श्री गुरुदेव की कृपा नहीं है, उनके विद्या, धन, बल और भाग्य निरर्थक हैं। हे पार्वती उनका अधः पतन होता है।

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोद्भवः।
धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद् गुरु-भक्तता॥152॥

जिसके अन्दर गुरुभक्ति हो उसकी माता धन्य है। उसका पिता धन्य है। उसका कुल धन्य है। उसके कुल में जन्म लेने वाले धन्य है। समस्त धरती माता धन्य है।

शरीरम् इन्द्रियं प्राणान् चार्थं स्व-जन-बन्धुताम्।
मातृकुलं पितृकुलं गुरुरेव न संशयः॥153॥

शरीर, इन्द्रियाँ, प्राण, धन, स्वजन, बन्धु-बान्धव, माता का वंश, पिता का कुल सब गुरुदेव ही हैं, इसमें संशय नहीं है।

गुरुर्-देवो गुरुर्-धर्मो गुरौ निष्ठां परं तपः।
गुरोः परतरं नास्ति त्रि-वारं कथयामि ते॥154॥

सद्गुरुदेव ही भगवान हैं, धर्म ही गुरुदेव हैं, अतः गुरु में निष्ठा ही परम तप है। गुरुदेव से अधिक और कुछ नहीं है। यह मैं तीन बार कहता हूँ।

समुद्रे वै यथा तोयं क्षीरे क्षीरं घृते घृतम्।
भिन्ने कुंभे यथाऽऽकाशं तथाऽऽत्मा परमात्मनि॥155॥

जिस प्रकार सागर में पानी, दूध में दूध, घी में घी अलग-अलग घड़ों में आकाश एक और अभिन्न है। उसी प्रकार परमात्मा के साथ जीवात्मा एक और अभिन्न है।

तथैव ज्ञानवान् जीवः परमात्मनि सर्वदा।
ऐक्येन रमते ज्ञानी यत्र कुत्र दिवानिशम्॥156॥

इसी प्रकार ज्ञानी सदा परमात्मा के साथ अभिन्न होकर रात-दिन आनंद विभोर होकर सर्वत्र विचरते हैं और अज्ञानी लोग इस शरीर को ही अपना स्वरूप मानते हैं और वह इस माया रूपी संसार में फस जाता है।

गुरु-सन्तोषणाद् एव मुक्तो भवति पार्वति।
अणिमादिषु भोक्तृत्वं कृपया देवि जायते।।157।।

हे प्रिये- गुरुदेव को सन्तुष्ट करने से साधक मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। हे देवी- गुरुदेव की कृपा से वह अणिमा महिमा, लघिमादि अष्ट सिद्धियों का भोग प्राप्त करता है।

साम्येन रमते ज्ञानी दिवा वा यदि वा निशि।
एवं विधो महामौनी त्रैलोक्य-समतां व्रजेत्।।158।।

ज्ञानी पुरुष दिन हो या रात्रि हो, सदा सर्वदा एक समान समत्त्व भाव से रमण करते हैं। इस प्रकार के महामौनी अर्थात् ब्रह्म में निष्ठा रखने वाले महात्मा तीनों लोकों में समान भाव से गति करते हैं क्योंकि ऐसे ज्ञानी सम्पूर्ण जगत को ब्रह्ममय समझते हैं।

गुरु-भावः परं तीर्थम् अन्यतीर्थं निरर्थकम्।
सर्व-तीर्थमयं देवि श्रीगुरोः चरणाम्बुजम्।।159।।

गुरुभक्ति ही सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है। क्योंकि गुरुभक्ति से मन का मैल साफ हो जाता है। अन्य तीर्थ निरर्थक हैं। हे देवी- गुरुदेव के चरण कमल ही सर्वतीर्थमय हैं।

कन्या-भोग-रता मन्दाः स्व-कान्तायाः पराङ्मुखाः।
अतः परं मया देवि कथितन्न मम प्रिये॥160॥

हे पार्वती, हे देवी! कन्या के भोग में रत, अपनी स्त्री से मुँह फेरने वाले, ऐसे बुद्धिशून्य लोगों को मेरा यह आत्मप्रिय परम बोध मैंने नहीं कहा, ऐसा व्यक्ति ज्ञान का सदुपयोग नहीं करेगा।

अभक्ते वंचके धूर्ते पाखंडे नास्तिकादिषु।
मनसाऽपि न वक्तव्या गुरुगीता कदाचन॥161॥

अभक्त, कपटी, धूर्त, पाखण्डी, नास्तिक इत्यादि को यह गुरुगीता कहने के लिए मन में सोचना तक नहीं चाहिए अर्थात ऐसे व्यक्ति को गुरुगीता कभी भी नहीं कहनी चाहिए।

गुरवो बहवः सन्ति शिष्य-वित्तस्य हारकाः।
तमेकं दुर्लभं मन्ये शिष्य-संतापहारकम्॥162॥

शिष्य के धन को हरण करने वाले गुरु तो बहुत हैं लेकिन शिष्य के हृदय के संताप का अपहरण करने वाला एक गुरु भी दुर्लभ है। ऐसा मैं मानता हूँ।

चातुर्यवान् विवेकी च अध्यात्म-ज्ञानवान् शुचिः।
मानसं निर्मलं यस्य गुरुत्वं तस्य शोभते॥163॥

जो चतुर हो, विवेकी हो, अध्यात्म का ज्ञाता हो, पवित्र हो तथा निर्मल मानस वाला हो, उसको ही गुरु पद पर आसीन होने का अधिकार है।

गुरवो निर्मलाः शान्ताः साधवो मित-भाषिणः।
काम-क्रोध-विनिर्मुक्ताः सदाचारा जितेन्द्रियाः॥164॥

गुरु निर्मल, शान्त, साधु स्वभाव के, मीठीवाणी वाले काम-क्रोध से अत्यन्त रहित, सदाचारी और जितेन्द्रिय होते हैं किसी वस्तु की कामना नहीं करते, जो मिल जाए उसी में सन्तुष्ट रहते हैं।

सूचकादि-प्रभेदेन गुरवो बहुधा स्मृताः।
स्वयं सम्यक् परीक्ष्याथ तत्त्वनिष्ठं भजेत् सुधीः॥165॥

सूचक आदि भेद से अनेक गुरु कहे गये हैं। बुद्धिमान मनुष्य को स्वयं योग्य विचार करके तत्वनिष्ठ सद्गुरु की शरण लेनी चाहिए।

वर्ण-जालम् इदं तद्वद् बाह्य-शास्त्रं तु लौकिकम्।
यस्मिन् देवि समभ्यस्तं स गुरुः सूचकः स्मृतः॥166॥

हे देवी वर्ण और अक्षरों से सिद्ध करने वाले बाहरी लौकिक शास्त्रों का जिसको अभ्यास है। वह गुरु सूचक गुरु कहलाता है।

वर्णाश्रमोचितां विद्यां धर्माधर्म-विधायिनीम्।
प्रवक्तारं गुरुं विद्धि वाचकः त्विति पार्वति॥167॥

हे देवी, धर्म-अधर्म का विधान करने वाले, वर्ण और आश्रम के अनुरूप विद्या का प्रवचन करने वाले गुरु को तुम वाचक गुरु जानो।

पंचाक्षर्यादि-मन्त्राणाम् उपदेष्टा तु पार्वति।
स गुरुर्बोधको भूयाद् उभयोः अयम् उत्तमः॥168॥

पंचाक्षरी आदि मंत्रों का उपदेश देने वाले गुरु 'बोधकगुरु' कहलाते हैं। हे पर्वती, प्रथम दो प्रकार के गुरुओं से ये उत्तम गुरु हैं।

मोह-मारण-वश्यादि-तुच्छ-मन्त्रोपदर्शिनम्।
निषिद्ध-गुरुः इत्याहुः पण्डिताः तत्त्व-दर्शिनः॥169॥

मोहन, मारण, वशीकरण आदि तुच्छ-मंत्रों को बताने वाले गुरु को तत्वदर्शी पण्डित निषिद्ध गुरु कहते हैं।

अनित्यम् इति निर्दिश्य संसारे संकटालयम्।
वैराग्य-पथ-दर्शी यः स गुरुः विहितः प्रिये॥170॥

हे प्रिये, यह संसार अनित्य और दुःखों का घर है। ऐसा समझकर जो गुरु वैराग्य का रास्ता बताते हैं। वे 'विहित गुरु' कहलाते हैं।

तत्त्वमस्यादि-वाक्यानाम् उपदेष्टा तु पार्वति।
कारणाख्यो गुरुः प्रोक्तो भव-रोग-निवारकः॥171॥

हे पार्वती, 'तत्वमसि' आदि महावाक्यों का उपदेश देने वाले तथा संसाररूपी रोगों का निवारण करने वाले गुरु 'कारणाख्य गुरु' कहलाते हैं।

सर्व-सन्देह-सन्दोह-निर्मूलन-विचक्षणः।
जन्म-मृत्यु-भयघ्नो यः स गुरुः परमो मतः॥172॥

सभी प्रकार की शंकाएँ, सन्देहों का जड़ से नाश करने में जो चतुर हैं। जन्म-मृत्यु तथा भय का जो विनाश करते हैं वे 'परम गुरु' कहलाते हैं। जो सद्गुरु साधक को आत्मस्वरूप का प्रत्यक्ष दर्शन करा देता है। वे ही 'परमगुरु' अथवा सद्गुरु कहलाते हैं।

बहुजन्म-कृतात् पुण्याद् लभ्यतेऽसौ महागुरुः।
लब्ध्वाऽमुं न पुनर्-याति शिष्यः संसार-बन्धनम्॥173॥

जिस व्यक्ति के अनेक जन्मों में किये पुण्यों से ऐसे ब्रह्मज्ञानी गुरु प्राप्त होते हैं। उनको प्राप्त कर व्यक्ति पुनः इस संसार रूपी बंधन में नही बंधता है। अर्थात मुक्त हो जाता हैं।

एवं बहुविधा लोके गुरवः सन्ति पार्वति।
तेषु सर्व-प्रयत्नेन सेव्यो हि परमो गुरुः॥174॥

हे पार्वती- इस प्रकार संसार में अनेक प्रकार के गुरु होते है, इन सब में एक परम गुरु का ही सेवन सर्व प्रयत्नों से करना चाहिए।

पार्वती उवाच

स्वयं मूढा मृत्यु-भीताः सुकृताद् विरतिं गताः।
दैवाद् निषिद्ध-गुरुगा यदि तेषां तु का गतिः॥175॥

पार्वती ने कहा- जो व्यक्ति प्रकृति से मूढ़ हों, मृत्यु से डरते

हों, सत्कर्म से बहिर्मुख हों, वे दैवयोग से निषिद्ध गुरु का सेवन करें तो उनकी क्या गति होती है?

श्रीमहादेव उवाच

निषिद्ध-गुरुशिष्यः तु दुष्ट-संकल्प-दूषितः।
ब्रह्म-प्रलय-पर्यन्तं न पुनर्-याति मर्त्यताम्॥176॥

भगवान श्री महादेव जी बोले, जो निषिद्ध गुरु का शिष्य, दुष्ट संकल्पों से दुष्ट कर्म करता है। उसे उन दुष्टकर्मों के कारण कल्प पर्यन्त मनुष्य योनि प्राप्त नहीं होती।

शृणु तत्त्वम् इदं देवि यदा स्याद् विरतो नरः।
तदासावधिकारीति (तदा असौ अधिकारीति) प्रोच्यते श्रुतमस्तके॥177॥

हे देवी, इस तत्त्व को सुनो, जब मनुष्य इस जगत रूपी भोग-वासनाओं से विरक्त होता है, तभी वह अधिकारी कहा जाता है। ऐसा वर्णन उपनिषद करते हैं अर्थात दैवयोग से गुरु प्राप्त होने की बात अलग है और विचार से गुरु चुनने की बात अलग है।

अखण्डैकरसं ब्रह्म नित्य-मुक्तं निरामयम्।
स्वस्मिन् सन्दर्शितं येन स भवेद् अस्य देशिकः॥178॥

जो अखण्ड, एकरस, नित्यमुक्त और निरामय ब्रह्म को अपने अन्तर बाहर दिखलाते हैं, वे ही गुरु होने चाहिए, ऐसा गुरु शिष्य को आत्मबोध कराता है। वह सद्गुरु ही आत्मा को

जगाकर बोध कराता है कि तू ब्रह्म ही है।

जलानां सागरो राजा यथा भवति पार्वति।
गुरूणां तत्र सर्वेषां राजायं परमो गुरुः॥179॥

हे पार्वती- जिस प्रकार सब नदियों, तालाबों, कुएँ आदि का राजा सागर है, उसी प्रकार सब गुरुओं में 'परम गुरु' राजा है।

मोहादि-रहितः शान्तो नित्य-तृप्तो निराश्रयः।
तृणी-कृत-ब्रह्म-विष्णु-वैभवः परमो गुरुः॥180॥

मोह, ममता, आसक्ति, कामानादि दोषों से रहित शान्त चित वाले, सदैव तृप्त, किसी के आश्रय रहित अर्थात स्वाश्रयी, ब्रह्मा और विष्णु के वैभव को तुच्छ समझने वाले गुरु ही 'परम गुरु' है।

सर्व-काल-विदेशेषु स्वतन्त्रो निश्चलः सुखी।
अखण्डैक-रसास्वाद-तृप्तो हि परमो गुरुः॥181॥

सर्व काल और सभी देशों में स्वतन्त्र, सदैव निश्चल सुख और दुःख की परवाह नहीं करता, अखण्ड ब्रह्म के आनन्द से तृप्त रहता है। ऐसा गुरु ही परम गुरु होता है।

द्वैताद्वैत-विनिर्मुक्तः स्वानुभूति-प्रकाशवान्।
अज्ञानान्ध-तमश्छेत्ता सर्वज्ञः परमो गुरुः॥182॥

द्वैत और अद्वैत से मुक्त, अपने अनुभव रूप प्रकाश वाले,

अज्ञान रूपी अंधकार को छेदने वाले और सर्वज्ञ ही परम गुरु है।

यस्य दर्शन-मात्रेण मनसः स्यात् प्रसन्नता।
स्वयं भूयात् धृतिः शान्तिः स भवेत् परमो गुरुः॥183॥

जिनके दर्शन मात्र से मनुष्य का मन प्रसन्न होता है, अपने आप धैर्य और शान्ति आ जाती हो, वे परम गुरु हैं।

स्व-शरीरं शवं पश्यन् तथा स्वात्मानम् अद्वयम्।
यः स्त्री-कनक-मोहघ्नः स भवेत् परमो गुरुः॥184॥

जो अपने शरीर को शव समान समझते हैं अपने आत्मा को अद्वय जानते हैं। जो कामिनी कंचन आदि भौतिक वस्तुओं के मोह को नष्ट कर चुके हैं, वे 'परम गुरु' हैं।

मौनी वाग्मीति तत्त्वज्ञो द्विधाभूत् शृणु पार्वति।
न कश्चिद् मौनिना लाभो लोकेऽस्मिन् भवति प्रिये॥185॥

हे पार्वती सुनो, तत्वज्ञ दो प्रकार के होते हैं-मौनी और वक्ता। हे प्रिये, इन दोनों में से मौनी गुरु द्वारा लोगों को कोई लाभ नहीं होता है। जो ब्रह्म की प्राप्ति कर लेता है, वह मौन हो जाता है और उस ब्रह्म के आनन्द में ही मग्न रहता है।

वाग्मी तूत्कट-संसार-सागरोत्तारण-क्षमः।
यतोऽसौ संशयच्छेत्ता शास्त्रोक्त्यनुभूतिभिः॥186॥

किन्तु वक्ता गुरु इस भयंकर संसार रूपी सागर को पार करने में समर्थ होते हैं। क्योंकि वे शास्त्रों के वचनों और अपने अनुभवों से सभी संशयों का छेदन करते हैं।

गुरुनामजपाद् देवि बहु-जन्मार्जितान्यपि।
पापानि विलयं यान्ति नास्ति सन्देहम् अण्वपि॥187॥

हे देवी- गुरु नाम के जप से अनेक जन्म-जन्मान्तर के एकत्रित हुए पाप भी नष्ट होते हैं। इसमें अणुमात्र भी संशय नहीं है।

कुलं धनं बलं शास्त्रं बान्धवाः सोदरा इमे।
मरणे नोपयुज्यन्ते गुरुः एको हि तारकः॥188॥

अपना कुल, धन, बल, शास्त्र, नाते-रिश्तेदार, भाई ये सब मृत्यु के अवसर पर कुछ काम नहीं आते, एक मात्र गुरुदेव ही उस समय तारण कर्ता हैं। इसलिए गुरु का साथ नहीं छोड़ना चाहिए।

कुलम् एव पवित्रं स्यात् सत्यं स्व-गुरु-सेवया।
तृप्ताः स्युः सकला देवा ब्रह्माद्या गुरु-तर्पणात्॥189॥

जो अपने गुरु की सेवा करता है, सचमुच उसका अपना सारा कुल पवित्र होता है। गुरुदेव के तर्पण से ब्रह्मा आदि सब देवता तृप्त होते हैं।

स्वरूप-ज्ञानशून्येन कृतमप्य-कृतं भवेत्।
तपो जपादिकं देवि सकलं बाल-जल्पवत्॥190॥

हे देवी- स्वरूप के ज्ञान के बिना किए हुए जप-तप मंत्र साधना सब कुछ न के बराबर हैं, वे बालक के बकवाद के समान (व्यर्थ) है, अतः उनसे कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

न जानन्ति परं तत्त्वं गुरु-दीक्षा-पराङ्मुखाः।
भ्रान्ताः पशु-समा ह्येते स्व-परिज्ञान-वर्जिताः॥191॥

गुरुदीक्षा से विमुख रहे हुए लोग परम ज्ञान को नहीं जान सकते हैं। आत्मज्ञान से रहित वे सच में पशु के समान भ्रमण कर रहे हैं।

तस्मात् कैवल्य-सिद्ध्यर्थं गुरुम् एव भजेत् प्रिये।
गुरुं विना न जानन्ति मूढाः तत् परमं पदम्॥192॥

इसलिए हे प्रिये, कैवल्य(मुक्ति) की सिद्धि के लिए गुरु का ही भजन करना चाहिए, गुरु के बिना मूढ़ लोग (अज्ञानी लोग) परम पद को नहीं जान सकते।

भिद्यते हृदय-ग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व-संशयाः।
क्षीयन्ते सर्व-कर्माणि गुरोः करुणया शिवे॥193॥

हे शिवे! गुरुदेव की कृपा से हृदय की ग्रन्थि छिन्न हो जाती है। सब प्रकार के संशय कट जाते हैं और सर्व कर्म नष्ट हो जाते

हैं क्योंकि इस ग्रन्थि को खोलने में केवल गुरुदेव की करुणा ही सक्षम हैं।

कृताया गुरुभक्तेस्तु वेद-शास्त्रानुसारतः।
मुच्यते पातकाद् घोराद् गुरुभक्तो विशेषतः॥194॥

वेद और शास्त्रों के अनुसार विशेष रूप से गुरु की भक्ति करने से गुरुभक्त घोर पाप से भी मुक्त हो जाता है।

दुःसंगं च परित्यज्य पाप-कर्म परित्यजेत्।
चित्त-चिह्नम् इदं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते॥195॥

दुर्जनों का संग त्यागकर पाप कर्म छोड़ देना चाहिए जिसके चित में ऐसा चिह्न देखा जाता है उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है, फिर वह गुरु की मर्यादा में बंध जाता है।

चित्त-त्याग-नियुक्तः च क्रोध-गर्व-विवर्जितः।
द्वैत-भाव-परित्यागी तस्य दीक्षा विधीयते॥196॥

चित्त का त्याग करने में जो प्रयत्नशील है क्रोध, घमंड व लालच से जो रहित है। द्वैतभाव का जिसने त्याग किया है, उसके लिए गुरुदीक्षा का विधान है।

एतद् लक्षण-संयुक्तं सर्व-भूत-हिते रतम्।
निर्मलं जीवितं यस्य तस्य दीक्षा विधीयते॥197॥

जिसका जीवन इन लक्षणों से युक्त हो। निर्मल हो, जो

सब जीवों के कल्याण में रत हो, उसके लिए गुरु दीक्षा का विधान है।

अत्यन्त-चित्त-पक्वस्य श्रद्धा-भक्ति-युतस्य च।
प्रवक्तव्यम् इदं देवि ममात्म-प्रीतये सदा।।198।।

हे देवी- जिसका चित्त अत्यन्त परिपक्व हो, श्रद्धा और भक्ति परिपूर्ण हो, उसे यह तत्व सदा मेरी प्रसन्नता के लिए कहना चाहिए।

सत् कर्म-परिपाकात् च चित्त-शुद्धस्य धीमतः।
साधकस्यैव वक्तव्या गुरुगीता प्रयत्नतः।।199।।

जिसका चित्त सत्कर्म से परिपक्व हो और जो बुद्धिमान साधक हो, उसे ही गुरुगीता प्रयत्न पूर्वक कहनी चाहिए।

नास्तिकाय कृतघ्नाय दांभिकाय शठाय च।
अभक्ताय विभक्ताय न वाच्येयं कदाचन।।200।।

नास्तिक, कृतघ्न, दम्भी, शठ, अभक्त, पाखण्डी अहंकारी, विरोधी को यह गुरुगीता कदापि नहीं कहनी चाहिए।

स्त्री-लोलुपाय मूर्खाय कामोपहत-चेतसे।
निन्दकाय न वक्तव्या गुरु-गीता-स्वभावतः।।201।।

स्त्री लम्पट, मूर्ख, कामवासना से ग्रस्त चित्त वाले तथा निन्दक को गुरुगीता बिल्कुल नहीं कहनी चाहिए।

एकाक्षर-प्रदातारं यो गुरुर्-नैव मन्यते।
श्वान-योनि-शतं गत्वा चाण्डालेष्वपि जायते॥202॥

एकाक्षर मंत्र का उपदेश करने वाले को जो गुरु नहीं मानता, वह सौ जन्मों तक कुत्ता (श्वान) होकर फिर चाण्डाल की योनि में जन्म लेता है।

गुरु-त्यागाद् भवेद् मृत्युर्-मन्त्रत्यागाद् दरिद्रता।
गुरु-मन्त्र-परित्यागी रौरवं नरकं व्रजेत॥203॥

गुरु का त्याग करने से मृत्यु होती है। मंत्र का जप छोड़ने से दरिद्रता आती है और गुरु और मंत्र का त्याग करने से महानरक मिलता है।

शिव-क्रोधाद् गुरुस्-त्राता गुरुक्रोधात् शिवो न हि।
तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन गुरोर्-आज्ञां न लंघयेत्॥204॥

भगवान शिव के क्रोध से गुरुदेव रक्षा करते हैं परन्तु गुरुदेव के क्रोध से शिव जी रक्षा नहीं करते अतः सब प्रयत्नों से गुरुदेव की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए क्योंकि भगवान श्री गुरु के माध्यम से ही किसी का उद्धार करते हैं।

सप्त-कोटि-महामन्त्राः चित्त-विभ्रंश-कारकाः।
एक एव महामन्त्रो गुरुर्-इत्यक्षरद्वयम्॥205॥

सात करोड़ महामंत्र विद्यमान हैं, वे सब चित्त को भ्रमित करने वाले हैं, परन्तु ''गुरु'' नाम केवल दो अक्षर वाला एक

मंत्र ही महामंत्र है।

न मृषा स्याद् इयं देवि मदुक्तिः सत्य-रूपिणी।
गुरुगीता-समं स्तोत्रं नास्ति नास्ति महीतले।।206।।

हे देवी, मेरा यह कथन कभी असत्य नहीं होगा, वह सत्य स्वरूप है, इस पृथ्वी पर गुरुगीता के समान अन्य कोई स्तोत्र नही है।

गुरुगीताम् इमां देवि भवदुःख-विनाशिनीम्।
गुरुदीक्षा-विहीनस्य पुरतो न पठेत् क्वचित्।।207।।

गुरुगीता सभी प्रकार के दुःखों का नाश करने वाली है इसका पाठ गुरुदीक्षा विहीन मनुष्य के आगे कभी नहीं करना चाहिए।

रहस्यम् अत्यन्त-रहस्यमेतद्
न पापिना लभ्यम् इदं महेश्वरि।
अनेक-जन्मार्जित-पुण्यपाकाद्
गुरोस्तु तत्त्वं लभते मनुष्यः।।208।।

हे महेश्वरी- यह रहस्य अत्यंत गुप्त रहस्य है, पापी व्यक्तियों को यह नहीं मिलता, अनेक जन्मों के किये हुए पुण्यों से परिपूर्ण मनुष्य ही गुरुतत्व को प्राप्त कर सकता है।

सर्व-तीर्थावगाहस्य संप्राप्नोति फलं नरः।
गुरोः पादोदकं पीत्वा शेषं शिरसि धारयन्॥209॥

श्री सद्गुरु के चरणामृत का पान करने से और उसे मस्तक पर धारण करने से मनुष्य सभी तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त करता है। अतः उसे अन्य तीर्थ में जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

गुरु-पादोदकं पानं गुरोः उच्छिष्टभोजनम्।
गुरुमूर्तेः सदा ध्यानं गुरोर्-नाम्नः सदा जपः॥210॥

गुरुदेव के चरणामृत का पान करना, गुरुदेव के भोजन में से बचा हुआ खाना, गुरुदेव की मूर्ति का ध्यान करना और गुरुनाम का जप करना चाहिए।

गुरुः एको जगत् सर्वं ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मकम्।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात् संपूजयेद् गुरुम्॥211॥

ब्रह्मा, विष्णु और शिव सहित समग्र जगत गुरुदेव से समाविष्ट है। गुरुदेव से अधिक और कुछ भी नहीं है। इसलिए गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए।

ज्ञानं विना मुक्ति-पदं लभ्यते गुरु-भक्तितः।
गुरोः समानतो नान्यत् साधनं गुरु-मार्गिणाम्॥212॥

गुरुदेव के प्रति अनन्य भक्ति से ज्ञान के बिना भी मोक्ष पद

मिलता है। गुरु के द्वारा बताए गए मार्ग पर चलने वालों के लिए गुरुदेव के समान अन्य कोई साधन नही है।

गुरोः कृपा-प्रसादेन ब्रह्म-विष्णु-शिवादयः।
सामर्थ्यम् अभजन् सर्वे सृष्टि-स्थित्यंत-कर्मणि॥213॥

गुरु के कृपा प्रसाद से ही ब्रह्मा जी संपूर्ण सृष्टि की रचना (उत्पत्ति) करते हैं। भगवान विष्णु पालन करते हैं और भगवान शिव प्रलय करने का सामर्थ्य प्राप्त करते हैं। इसलिए गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, शिव के समान मानना चाहिए।

मन्त्रराजम् इदं देवि गुरुर्-इत्यक्षरद्वयम्।
स्मृति-वेद-पुराणानां सारमेव न संशयः॥214॥

हे देवी- गुरु यह दो अक्षरों वाला मंत्र सब मंत्रों में राजा है, श्रेष्ठ है। स्मृतियों, वेद और पुराणों का वह सार ही है। इसमें संशय नहीं है।

यस्य यस्य प्रसादाद् अहमेव सर्वं
मय्येव सर्वं परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं
तस्यांघ्रि-पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्॥215॥

मैं ही सब हूँ, मुझमें ही सब कल्पित है, ऐसा ज्ञान जिनकी कृपा से हुआ है, ऐसे आत्म स्वरूप श्री सद्गुरुदेव के श्री चरण कमलों में मैं सदैव नमन करता हूँ।

अज्ञान-तिमिरान्धस्य विषयाक्रान्त-चेतसः।
ज्ञान-प्रभा-प्रदानेन प्रसादं कुरु मे प्रभो॥216॥

हे प्रभो-अज्ञान रूपी अंधकार में अंधे बने हुए और विषयों से आक्रान्त चितवाले मुझपर ज्ञान का प्रकाश देकर कृपा करो, जैसे सूर्य नारायण के उदय होने पर संपूर्ण जगत का अंधकार मिट जाता है। साधक को उसी ज्ञान रूपी प्रकाश के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

इति श्री-स्कान्दोत्तर-खण्डे उमामहेश्वर-संवादे
श्री गुरुगीतायां तृतीयः अध्यायः संपूर्णः

(इस प्रकार श्री स्कन्दपुराण के उत्तरखण्ड में शिव पार्वती संवाद में श्री गुरुगीता का तीसरा अध्याय संपूर्ण हुआ।)

ॐ भगवान श्री गुरुवे नमः
ॐ नमः शिवाय
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय



आरती श्री गुरुदेव जी की

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुसाक्षात् परं-ब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥

जय गुरुदेव दयानिधि दीनन हितकारी ।
जय जय मोह विनाशक भव बन्धन हारी ॥
ॐ जय जय...
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव गुरु मूरत धारी ।
वेद पुराण बखानत गुरु महिमा भारी ॥
ॐ जय जय...
जप तप तीरथ संयम दान विविध कीजै ।
गुरु बिन ज्ञान न होवे कोटि यतन कीजै ॥
ॐ जय जय...
माया मोह नदी जल जीव बहे सारे ।
नाम जहाज बिठा कर गुरु पल में तारे ॥
ॐ जय जय...

काम क्रोध मद मत्सर मोर बड़े भारी ।
ज्ञान खड्ग दे कर में गुरु सब संहारी ॥
ॐ जय जय...
नाना पंथ जगत में निज-निज गुण गावें ।
सब का सार बताकर गुरु मारग लावे ॥
ॐ जय जय...
गुरु चरणामृत निर्मल सब पातक हारी ।
वचन सुनत श्री गुरु के सब संशयहारी ॥
ॐ जय जय...
तन-मन धन सब अर्पण गुरु चरनन कीजै ।
ब्रह्मानन्द परम पद मोक्ष गति दीजै ॥
ॐ जय जय...



Narayan Shakti Peeth

C-27, 2nd Floor, Greater Kailash Enclave-1
New Delhi- 110048
E-mail : narayanshaktipeeth@gmail.com
www.narayanshaktipeeth.com